

माटी की गन्ध

शीला व्यास



श्री चन्दन प्रकाशन

गंगाशहर - बीकानेर

- प्रकाशक

श्री चन्दन प्रकाशन

शीला-सदन, पुरानी लेन

पो गगाप्रहर-334001 बीकानेर

सर्वाधिकार लेखकाधीन

- प्रथम संस्करण अक्टूबर 1992

शरद पूर्णिमा आश्विन पूर्णिमा सवत् 2049

सम्पर्क सूत्र

- श्री चन्दन प्रकाशन

शीला-सदन पुरानी लेन

पो गगाप्रहर-334401

- मूल्य साठ रुपये

- आवरण शिल्पी अमित भारती

मुद्रक

- चण्ड्याणी प्रिण्टर्स

मासगोदाम रोड, बीकानेर

Matee Ki Gandh Smt Sheela Vyas Rs 60

माटी की गन्ध

(कहानी संग्रह) ३ :



सत्-साहेब

श्री सद्-गुरु चरण कमलैभ्यो नमः

अनन्त यात्रा के महान् ययाति

एव

सहज साधना के अमर साधक

सद्गुरु श्री

अवधूत शिरोमणि श्री चन्दन देवजी महाराज को

शत्-शत् नमन्

साहित्य सृजन की डगर पर जिसने अगुली पकड़ कर
चलना सिखलाया

एव

निरन्तर रचना धर्मिता की ओर प्रोत्साहित किया है

उस महान् विभूति

ममता-मयी

मातृश्री



श्रीमती विद्यादेवी

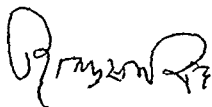
को

सादर समर्पित

शिवारते पन्था.

श्रीमती शीला व्यास की अद्यतन कहानियों का संग्रह "माटी की गंध" पाठको के हाथों में सौंपी जा रही है। इधर की कहानियों के बारे में अक्सर रचनात्मकता मर रही है जैसी चीजें नारो के रूप में हिन्दी की कहानी पत्रिकाओं में उछाली जाती रही हैं। एक सुदूर अंचल में जो हिन्दी क्षेत्र से बहुत दूर है, बैठी हुई लेखिका जब अपनी अनुभूति से उभरे घर-आँगन की बात करती है तो स्वयं में अपने आप रचनाधर्मी बन जाती है और उसे लोकापण के समय किसी चलते नारे की कोई जरूरत नहीं है। मैंने इन कहानियों को बड़े ध्यान से पढ़ा किंचित सम्वेदनात्मक प्राचीनता की गंध तो है पर पारिवारिक तनाव और उसको भेल लेने की क्षमता तथा उम्र अभिव्यक्त करने की शक्ति कथा-लेखिका में स्पष्टतः दृष्टि गांघर होती है। मैं इस अक्सर पर इतना ही कहना चाहूंगा कि यह छोटा सा कहानी संग्रह दुख्ख राह पर चलने वालों के लिए पाथेय बन सकेगा।

डॉ० शिवप्रसाद सिंह
वरिष्ठ कथाकार एवं समीक्षक
१३ गुरुधाम कॉलोनी,
वाराणसी



गं० म रचना का अर्थ दम हुए था, अग्रा महिन अपने आस-पास को फिर से रचना है रचना रक्षा व दम आधार विचार के साथ इन कथाओं का पढ़त-पढ़ते ही लगा कि ये क्याए मात्र स्मृतिया का सचया भर नहीं पुन रचाय व सायक प्रयास हैं यह सायक 'आत्मामानि' और 'दद व रिपत' म अधिक उमर कर आया है

पुन रचाय के दम तरह के दरमारी के बावजू म मुझे ये कहानिया प्रचलित अय म भाधुनिक नहीं लगती पाठक द म मुझे यह 'अन भाधुनिकपन' सुगद ही लगा । सम्मण रेखाए फिर विचार को हा, व्यवहार की हा या फिर गित्त की, ताडने सधो की प्रक्रिया मे उदुधा पुछ एसा छूट जाता है कि क्या ताडा गया या फिर नाप कर कहा टिका गया जस प्रग ही उमर दिवते है

शीलाजी की कहानिया म मुझ पाठक को य प्रसन्न नहीं दिव दिखते हुए क उकेरन म व गगा और रन के निवट रही हैं उनमे दम सामीप्य के साथ यह भी रेखांकित किया चाहना है कि अपने सास्कारिक घेरे क कारण ही व पुरुष प्रधान व्यवस्था के चलते नारी को निमम नहीं कर पाई हैं यह सही है निमम होना अरन आपमे विशेष मूल्य से सम्प न हाना नहीं है चूंकि मुझ पाठक का लिखने की धारणा ही यह है कि शब्द म रचने का अय रचे हुए को फिर से रचना होता है फिर से रचाव की यह प्रक्रिया और तीव्र रूप म उमर कर आए और पाठक को विचलित करे और स्वय के बलाव पर सोचने को विवश करे मैं एव पाठक के रूप म शीलाजी व रचनाकार से यह अपेक्षा करता हू

अनुभूतियों के कथा दरमाव जितने शीलाजी के उतने ही निवट मुझे अपने भी लगे हैं यह है हमारे परिवेश की मानसिकता, हैं मेरे आस पास ऐमे चरित्र बहुत देर तक लग सकता है कि हमारे परिवेश मे चलती स्थितियों और उनसे उपजते 'सत्राप्त अत्र शायद ही पर यह शायद मनुष्य जीवन का स्थायी भाव नहीं एक कयो और एक अत को आना ही होता है कयो और "अत" की भ्रनक्रिया हैं ये भ्रनकें घूप की चादर बन में शीलाजी क कथाकार के लिए यही कामना करता हू, सुखद यह कि शीलाजी बहुती नदी के साथ सूखे सागर से भी राग के साथ जुडी हैं

छत्रीली घाटी

बीकानेर

आत्म कथ्य

जीवन म कुछ एस विगट व्यक्तित्व आत ह, जा हृदय की चित्रपटी पर मशा न लिये प्रकित हा जात ह ? एव कुछ एसी अशुभूरित व्यथायें हाती ह ताका मम भेदी गटा हृदय स विस्मृत नहीं किया जा सकता, मरा यह कहानी-ह 'माटी की गथ' उही की व्यथा कथा स प्लावित है ।

इनम स कुछ कहानिया, टूट गया पिजरा ' 'माटी की गथ' 'रिश्ता की लकीरें' साहित्यिक पत्र-पत्रिकाआ म छपी, और पाठका ने इसम निहित व्यथा का अपने जावन म घटित व्यथा कथा ही समझ कर इनम सामजस्य बठाया, तथा मुझ प्रशंसा का पात्र बनाया है । यह मेरे पाठकों का ही अनुरोध रहा तथा उही की प्रेरणा है, जिसने मुझे इस कहानी संग्रह का प्रकाशित करा के लिय प्रेरित किया । मैं अपनी कहानिया न माध्यम से काई नई बात उहाँ कहना चाहती अपितु एव विशप वर्ग की व्यथा कथा का आपके समक्ष रखना चाहती ह ।

नारी का समाज म बहुत ऊचा स्थान दिया गया ह, पर उस अपन जावन म अनेक अतविराधा स गुजरना पडता है । उत्पीडित एव प्रताडित हाने पर भी मूख पशु की तरह सब कुछ सहन करना पडता है । कुछ एस दीन हीन व्यक्तिय होत है जिहें अपने हृदय पर पत्थर रखकर अभिशापित जीवन जीना पडता है मरा यह संग्रह उही का समर्पित ह । जाकी सवेदनाआ से मरा जुडाव कहा तक हा सका ह तथा पाठका न अन्तमा का घटनायें कहा तक भवभोर सकी ह, इगना निणय मैं सुविज्ञ पाठका पर ही छोडती ह ।

मैं अपनी माताआ श्रीमता बिद्या देवी क प्रति श्रद्धावनत ह जिन्हाने मुझ निरन्तर लिखने की प्ररणा दी ।

मैं अपने पिता आ डा देव सहाय त्रिपद न प्रति हादिक श्रद्धा न्यवत करती हूँ । जिहोन मुझ निरन्तर आचलिकता के बाध स प्रेरित किया एव माटी की सुवास स जुडे रहने का आत्म ज्ञान कराया ।

मेरे जीवन साथी डा० सिद्धराज मरी प्ररणा के अदम्य स्रोत रह हें जिहोन इसके प्रकाशन म अयक परिश्रम कर इसे आपके हाथा तक पहुचाया हैं । मैं मेरे मार्ग दशक डा देवी प्रसाद गुप्त उन प्राचाय, रा डूगर महाविद्यालय के प्रतिहादिक जामार व्यक्त करती हूँ जिहोन इसकी भूमिका निखकर मुझे निरन्तर रचना धर्मिता की ओर अग्रसित किया ह ।

-शीला व्यास

प्राण आज इसी माटी गंध के पर्याय हैं वू कि ये दानो बहानियाँ भाजपुरी परिवेश
 स जुड़ी हुई हैं अत इनकी नापारमक सरचना म भोजपुरी भाषा के मादव प्रयोग
 रूटिगत होते हैं। जैसे 'अर भाई रे ई का भडन ? गुरसतिया के ऊपर ता
 महुवा के पेड का भूत घडगइल घाटे भट से बीना आभा पडित घुला के भाडा
 मन्तर कराथ के परी, नाही तो परान सक्ठ म पड जाइ।' 'रिस्ता की लकौरें'
 नामक कहानी म एक भाई के असमय निघन पर उसस जुड़ी हुई अतीत की डेरों
 स्मृतिया का चित्रावन एष वहन की ममता भरी चित्रपटी पर उमरता है। कोना
 पटा पोस्टवाड पाकर बहन के हाथ लिफाफे म राप्ती रखने से रुक जाते हैं और
 बलसी पर भादू नूज का टीका काइत समय वह ठिठक जाती है। 'त मे दबा
 प्रस्तिरव' एक माँ की ऐसी व्यथा भरी कथा है, 'ता सात देटा क मरन से मानगि
 स्तर पर मन्तर रहनी है किंतु लोग उसे पागल समझत है। उसकी गन
 सवेदना इतना आनन्त करनी है कि रेत के टीलो मे मटक कर वह अपनी जीवन
 नीला ममाप्य कर गती है। 'मिमटता दपण' म एक ऐसी नागी की मम कथा
 है, जो लकव का शिकार हाकर कष्टमय जीवन यापन करती है। इग कहानी
 म बाराणसी नगरी के रूपावन के साथ शापो एष अ घविश्रामो से जुड़ी स्मृतियो
 का भी चित्रण हुया है। 'अभिशापित' जीवन की अतिविरोधी न्यतिया की
 कहानी ह एक पागल हैं जिम पट स बाघरन रखा जाना है किंतु सही मनोदशा
 म वह सभी काय ईमानगरी म करता है।

'आत्मग्लानि' शीपक कहानी मे राजस्थानी परिेश का उमारा गया है।
 इसम एक सामान्य सी घटना है कि गहिणी बगन चारी हान पर नौकरानी क
 भाये दाप मवती है अतन नौकरानी के निर्दोष सिद्ध होने पर आत्मग्लानि का
 अनुभव करती है। 'आनाका' कहानी म अधिकसित महित्त्व की बालिका का
 चित्रावन है जिसकी असामयिक मौन पर उसके पिता को विवाह की चिंता से
 मुक्ति मिलती है। 'दद क रिगते' म बड़े घर की स्त्री मार खाकर भी उते
 नगी पीठ सामने कर देती है। कहानी म बड़े परिवारो म मुम्नराह का मुखौटा
 धारण करने वाली नारिया की बरूप कथा दर्शायी गयी है। 'जीवन का सच'
 नामक कहानी म बाढ स हुई बर्बादी का नही बालिका क अलहूड बचपन का
 बोध नहीं होता कि तु बडी होने पर जीवन की सच्चाइयो से साक्षात्कार करते
 हुए यथाथ बोध स आश्रात होती है। 'बुनीतो' म एक ऐसी नारी का निरूपण
 है, जो अपनी सतान का पति का नाम देने के लिए गलत रास्ते पर चलना
 स्वीकार नहीं करती। वह स्वय को स्वावलम्बी बनाकर अपनी मजिल की स्वय
 तयाग करती है। 'आखिरी निलाप' पारिवारिक बलह की सामान्य कहानी है।
 'बिहम्बना' पुन एक ममस्पर्शी कहानी है, जिसम पालियो ग्रस्त बालिका की
 नेलने की अग्रो इच्छा का दर्शाया गया है। वह मात्र कल्पना करके

है। 'विवशता' नामक कहानी में अध्यायन कराने वाली उन शहरी अध्यापिकाओं की विवशता का दर्शाया गया है, जो बसों में रोज घूम-चल करते हुए अपना असहाय व्यक्त करती हैं। 'घाघात' में एक ऐसी माँ की कथा है जो सीतले घट पर सम्पूर्ण रोह वर्षा करने भी मानस्य का गौरव नहीं पाती। 'बालचर' में एक इज्जत ह्राद्वर के विवशताओं से भर-जीवा को उमारा गया है। 'परिरुति' में एक अनपढ़ विधवा नारी के जीवन सघप को निरुपित किया गया है जो परिश्रम से पढ़ाई करके अध्यापिका बनी और जिसने जीवन की ऊँचाईयों का स्पष्ट किया। 'सप्राप्त' में आरक्षण विरोधी आन्दोलन के समय आत्मदाह में अपने पुत्र सदोप की वय्या से व्यथित माना पिता की प्रतिक्रियाओं का निदर्शन हुआ है। 'घात्मघोष' कीपक कहानी में एक महत्याकाक्षी पति के घर छोड़कर चले जाने तथा पुत्र की ममता से प्रेरित होकर लौट आने का ऊहापोह अंकित हुआ है। धरौदा कहानी में किशोरावस्था में हुए विवाह के दुष्परिणाम एवं नारकीय जीवन का यर्षाय चित्रण प्रस्तुत करते हुए एक परिवार नियोजन की आवश्यकता पर बल दिया है।

समग्रतः सचलित कहानियाँ जैसा कि प्रारम्भ में कहा गया, हमारे पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन और परिवेश की ममस्पर्शी प्रतिक्रियाओं के रूप में रची गई हैं, इसीलिये इनमें ऐसी तीव्र और गहन अनुभूतियाँ हैं जो पाठक की सवेदनस्तर को छूती ही नहीं बरन भकभोरकर कुछ सोचने के लिए विवश करती हैं। कहानीकार की यही सफलता रेखांकित करने योग्य है। इस सग्रह की कहानी 2, 5, 12, 14, 15 कथ्य और शिल्प दाना ही दृष्टियों से सफल और सावक ह। इन कहानियों के रचना शिल्प के सम्बन्ध में कई प्रश्नचिह्न लगाए जा सकते हैं, किन्तु यह लेखिका का प्रथम प्रकाशित सबलन है और उन रचनाधर्मी सम्भावनाओं को साकार करता है, जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि श्रीमती शीला व्यास मविष्य में और अधिक प्रौढ कथा शिल्प से युक्त रचनाएँ प्रस्तुत कर सकेंगी।

'माटी की गंध' सग्रह के सफल प्रकाशन के लिए विदुषी कथा लेखिका शीला जी और उनके कमठ पति डॉ. मिद्वराज को हार्दिक बधाई देना है।

दि 11 अक्टूबर-1992
शरणा पूर्णिमा आश्विन पूर्णिमा स 2049

डॉ. देवी प्रसाद चुप्ट
उपप्राचार्य
श्री डूगर राजकीय स्नातकोत्तर
स्वायत्तशासी महाविद्यालय
बीकानेर

अनुक्रम

1	प्रेरणा	1
2	टूट गया पिंजरा	3
3	माटी की गंध	9
4	रिश्तो की लकीरें	17
5	रेत में दबा अस्तित्व	22
6	सिमटता दर्पण	26
7	अभिशापित	31

8	आत्म ग्लानि	36
9	आशका	40
10	दद के रिश्ते	42
11	जीवन का सच	45
12	चुनौती	48
13	आखिरी निरणय	52
14	विडम्बना	59
15	विवशता	63
16	आघात	67
17	काल चक्र	74
18	परिणति	83
19	सन्नास	88
20	आत्म बोध	96
21	घरौंदा	103

प्रेरणा

आश्विन मास का प्रथम दिवस । मानस मे अजीब सी हलचल है । मन आशा निराशा के भोके मे भूल रहा है । आज पूज्य गुरुदेव को हमे उन चिकित्सको के हाथो मे सौंप देना है, जो दूसरे शब्दो मे ईश्वर का प्रतिरूप समझे जाते हैं । कल की ही तो बात है, जब पूणमासी का चंद्र अपनी सोलह कलाओ के साथ उदित हुआ था और गुरुदेव की गभीर वाणी गूज उठी थी— “डाक्टर साहब अब यह शरीर मेरा नहीं रहा आप लोगो के हवाले है । मैंने इस शरीर से जो करना था सो कर लिया है । आप लोग अपना प्रयास बहुत कर रहे है, पर व्यथ राख पर धी डालने से क्या फायदा” किसे मालूम था कि यही उनके अंतिम शब्द होंगे जो सत्य सिद्ध हो जायेग ।

उनकी चरण वन्दना करते समय वे एकाएक चींक्र ही तो पडे तथा मेरे सिर पर हाथ रखकर बोले—“सबकी सेवा करो, अपने कर्तव्य के प्रति सजग रहो, मेरा आर्शावाद सदा तुम्हारे साथ है, “सिद्धराज” मेरे पास रहेगा, तुम अपनी ड्यूटी करो”, यह रात हमारे लिये परीक्षा की घडी थी जो आखो ही आखो मे कट गई थी । आपरेशन थियेटर मे ले जाने से पूव गुरुदेव ने उनके सिर पर हाथ रखकर आर्शावाद देते हुये कहा “मेरी सेवा मे रहना” और उहोने भी इसे प्राण प्रण से निमाया । मैं उस समय तो न जा सकी पर मेरा मन उनके इद - गिद ही मटक रहा था । आपरेशन करने से पहले गुरुदेव को अचेतन किया गया और उस दिन सारा भवन समूह उनके चेतना मे आने की प्रतीक्षा करता रहा कि, अब वे आखे टोलेंगे और कुछ अस्फुट शब्द उनके मुख से अमृत विंदु सदृश्य भर उठेंगे, पर सबकी आशा निराशा मे परिणत होती जा रही थी । शरीर के रोम रोम ने कानो और आखो का रूप ले लिया था पर सभी की आशाओ पर तुपारापात होता गया, समय गुजरता ही रहा गुरुदेव अचेतन अवस्था मे ही रह, चेतना मे लाने के सारे प्रयास विफल होते जा रहे थे, सब ओर गहन अधेरा सा छा गया था, जीवन का एक मात्र अवलम्बन हाथ से छूटता नजर आ रहा था, दिल और दिमाग जैसे सु न से हो गये थे, उसके बाद तो दिन और रात का चक्र अपनी अनवरत गति से चलता रहा, पर गुरुदेव सज्ञा शून्य ही रहे ।

—राज प्रात सूर्य उदय होता और मन मे एक आशा सी जगा जाता कि, आज तो गुरुदेव चैतन्य होंगे, उनके हाठ हिल उठेंगे शायद वो कुछ बोल उठे । डाक्टर उनके कानो के पास मुह रखकर जोर-जोर से आवाज लगाते—

—“गुरुदेव, बोलिये ना, एक बार बोलिये, अच्छा जरा एक बार भाष तो बोलिये”

—पर ऐसा लगता जैसे ये सहज समाधि में सीता हा या इग जगन में न रहकर उनकी आत्मा किसी दूसरे सोच में विचरण कर रही है। केवल हम लोगो को भ्रम में डालने के लिये यह शरीर यहाँ पड़ा हुआ है।

साध्या बिदा लेती, रात कासी चादर ओढ़कर सो जाती पर भक्तगण रात्रि को भी सेवा में लगे रहने, शायद गुरुदेव होश में आए और कुछ बोल उठे, इसी आशा निराशा के झूठे में झूलते हुये दिन बीतते गये। पितृ तपण दिवस भी आकर चले गये, महा शक्ति भगवती की आराधना के शुभ दिन भी पास लगाकर उठ गये, पर गुरुदेव वैसे ही साशा शून्य पड़े रहे। उनके विशिष्ट भक्तों न अमूल्य दवाओं, इजेवशन या प्रबंध किया, देहली और बम्बई से डाक्टरों के दल को निरीक्षण के लिये बुलाया गया, उन पावन विभूति की जीवित देगता ही उनका एकमात्र लक्ष्य था, उनके लिये पैसा गौण था। उनकी एक ही रट थी, लगन थी-

“डाक्टर साहब चाहे जितना रुपया लग जाये उसकी परवाह नहीं, हमारे गुरुदेव बच जाये-हमारे मन प्राण की यही पुकार है, एक बार केवल एक बार उनकी होश आ जाये”

पर जैसे समस्त व्यथा - कथा की ध्वनिया अस्पताल की दीवारों से टकराकर लौट आई, गुरुदेव वैसे ही अचेतन अवस्था में पड़े रह। नगर नगर से, गाव गाव से सुदूर प्रांतों से भक्तगण उनके दर्शना के लिय आते, भक्तों का समूह आपातकालीन बक्ष के बाहर बैठे रहता केवल इसी आशा में कि शामद गुरुदेव एक बार चेतन हो जायें, कुछ बाल, पर ऐसा न हो सका।

आश्विन मास व्यतीत होता गया उन एक मास में जैसे युग युगान्तर को अपने में समेट लिया था। कार्तिक मास में अपने पास फँलाये और प्रथम दिवस ही गुरुदेव ने मध्याह्न तक शरीर का हमेशा के लिये परित्याग कर दिया। अब तक उनकी घड़कने जो हमारे जीवन का स्पंदन बनी हुई थी, वो भी शान्त हो गई। वह महान आत्मा परमज्योति में विलीन हो गई थी। हम सबके प्रेरक इस लोक से बहुत दूर चले गये थे, उनके पार्थिव शरीर को हरिद्वार ल जाया गया था, हृदय और मस्तिष्क सुन्न से हो गये थे सब किर्तव्यविमूढ़ थे, पर काल चक्र के आगे किस का वश चलता है।

—वही मास है, वही दिन है, पर गुरुदेव का पार्थिव शरीर आज हमारे बीच नहीं है लेकिन हमारे साथ है उनका आर्शीवाद, उनकी प्रेरणा जो सदा जीवन को उन्नत सोपान की ओर अपसर करती रहेगी। ●

टूट गया पिजरा

फूलपत सहेलियों के साथ हँसी ठिठोला करती गगा के किनारे बालू के घरोंदे बनाने में जुटी थी। माई पुकार - पुकार कर अघा गई थी, पर फूलपत के काना पर जू ही नहीं रेंगी थी। कमी दुर्गा माता का चौतरा बनाती, उसमें गेंदे का फूल खोसती, बनाते - बनाते खिसिया जाती और ठीक नहीं बनता तो गगा के किनारे पानी में पंर डालकर सब की सब पत्थर पर बँठ जाती। उस पार से आने वाली नावों को देखती और एक दूसरे पर पानी उछालती। सभा घिरती आ रही थी। मलदहिया और मदरवा से आने वाले अहीर शहर में दिनभर दूध बेचने के बाद साईंकिली पर खाली टकी लिये घर लौट रहे थे, मल्लाह बिरहा गाने में मस्त थे। घोबी पछाड - पछाड कर मुँह से आवाज निकालते हुये कपडों को पत्थरों पर पटक - पटक कर धोने में लग थे। जब पीपे के पुल पर से कोई मोटर गुजरती तो सारा पुल घड - घड की आवाज से गूँज उठता, फूलपत और उसकी सहेलिया अचरज से इन सबको देखती और उनका जी भी धक - धक करने लगता।

फूलपत घाट पर नहान का बहाना लेकर आई थी, सभा घिरती देख माई का जी बचेन हो उठा था, पर गगा दशहरा के त्यौहार की तैयारी भी तो उसे ही करनी थी, गुडिया बनाना, उसे सजाना, गगा में सिलाना सबका भार उसी के ऊपर ही था, पर माई इन सब बातों को क्या जान उसे तो फूलपत का सारा काज ही अकारण लगता है। दिया जाती जल चुकने के बाद जब फूलपत घर लौटी तो माई ने उसे बस कर लताडा और पीठ पर घष से एक घोल जमा दिया था, पर बाबू ने उसे अपनी गोद में लुका लिया था और माई को बरजते हुये बोल पडे थे—

—जाय देब फूलपत की माई, काहे को बिटिया पर खिसियात हो, अब ही तो खाये खेले का दिन हो, फिर तो वेटी की जात का पता केकरे घर जाई, सुख मिली की दु ख इतो भाग की बात है” —

—और इस तरह बाबू ने फूलपत को माई की मार से बचा लिया था बसे माई का भी उस पर कम नेह नहीं था, चोरी छिपे माई खाने की चीजें कमी खटिया के पाये में खोसती, कभी छप्पर में और कभी हँडिया में लुकाती और फिर फूलपत के घर लौटने पर उसे सामने बिठाकर खिलाने में ही माई का जी जुटाता था।

वसे ता फुलपत के पडोस म बसी उस बड़ी काठी के लोग भी उससे कम नेह नहीं करते थे, जब भी वह उस कोठी मे जाती, बिन्नु की मा कभी उसे खाने के लिये चिडवा देती, कभी भूजा चना या उसना चावल की बनी हुई लाई जिसम नून और कडुवा तेल मिलाकर खाना उसे बहा नीक लगता था। बिन्नु की मा माथे पर बड़ी सी लाल टिकुली साटे रहती और भाग मे ढेर सा सिंदूर परा म महावर लगाये आगन मे बाहर से अंदर आती जाती। नौकरो को काम समझाती रहती, वह भी जरा मरा काम म हाथ बटाया करती। जब उस कोठी के बच्चे बस्ते लटकाये स्कूल जाते और स्कूल की बस उनके दरवाजे पर आकर जार जोर से होन बजाती तो फुलपत का जी भी ललचा उठता कि वह भी इनकी तरह कडप लगी ड्रेस पहन कर जूते मोजे डाट कर, लाल रंग की बस मे बैठकर स्कूल जाये और आखिर म फुलपत से रहा नहीं गया था। एक दिन तो वह माई के सामने जिद ही पकड बठी थी—

—माई हम ही ऊ लागन की तरह स्कूल जाव, हमरा के कपडा और वस्ता कुल ले दा माई, हम ही स्कूल जाव माई—

—तब माई न उसे झिडकते हुये कहा था—

—हम छोट जात के लोगन के पढे लिखे का कौनों दरकार नाही इ तो सब बड लोगन के टिटिमा बाजी है तू का कोई नौकरी करबू का ?

—और तब फुलपत मनमसोस कर चुप रह गई थी, आर उसके अबोध मन न भी यह स्वीकार कर लिया था।

लेकिन जब आमा के पेड पर बार आते तो वो और उसकी सहेलिया भी बीरा सी जाती, उस समय उनका चुप बठना मुश्किल था। जब पेडा पर कच्ची अमिया लद जाती और जोरा की आधी चलती तो ये सब इकट्ठी होकर कच्ची अमिया और बेर बटोरते निकल जाती, जगल जलवी तो ठेना मार मारकर तोडते उनका जी ही नहीं अघाता था।

गमा दशहरा के त्यौहार पर तो फुलपत और उसकी सहेलिया के उछाह का ठिकाना ही न था कितने दिना पहले से ही उन्होंने इसके लिये तैयारी कर रखी थी। सब अपनी अपनी गुडिया सजा कर लाती, उसे पानी म सिलाती ढेर सारी गुडिया बहती जा रही थी, नन्ह छोटे - छोटे हाथ उनके ऊपर पानी उलीच कर उन्हें आगे बहा रहे थे। किसकी गुडिया कितनी दूर जाती है और कितनी देर तक बहती है। इस बात की होड लगी हुई थी। ढेर सारी गुडिया पानी म बहती जा रही थी और फुलपत और सहेलिया मग्न हाकर गा रही थी—

“गंगा किनार मार बाबुल का द्वार हा”

“गुडिया खिलद्वारे माई के अ गनबा हो राम”

—आर इम तरह गंगा के किनारे धरोदे बनाते, गुडिया सिलाते, बगीचे मे कच्ची अमिया तोडते हुये फुलपत न कब जोवन की देहरी पर पाव रखे, इसका उसे खुद भी पता न चला, लेकिन एक दिन जब वह कचे पर नहाने के लिये लुग्गा उठाये घाट की आर अकेली जाने लगी ता माई उसे डपट कर बोली—

—“अब तू सिमान हो गइलू, तोहरा के घाट पर जाये की कौनो दरवार नाही, चुप मार के घर म बइठ जो”—

—और फिर विसुरती सी फुलपत मन मारे घर मे बठ गई थी बाबू न भी इधर उधर से जुगाड बिठा कर उसके हाथ पीन करने की सोच ही ली थी, आखिर जवान बेटी का कब तक घर मे बिठा कर रखता और फिर वह भी गरीब की बंटी—जिसे हर वाई जोरु बनाना चाहता है। क्या पता कब इज्जत को बट्टा लग जाये और वह किसी का मुह दिखान के लायक ही न रह। इसस तो अच्छा यही है कि जैसे तैम करके उसके हाथ भर पीन कर दे। और एक दिन फुलपत के द्वार पर गहनाई बज उठी। पीली घोती पहने बरातियो से घिरा हुआ दुल्हा उसके दुवार पर आया। माई ने परछन की पहली रस्म पूरी कर दी थी, पर उस दिन कितना उषम मचाया था बरातिया ने ताढी पीकर रान भर पतुरिया का नाच देखते रहे। गहना को लेकर भी खूब झूठ वाजी मचाई थी, उन लोगो न। भावर तो पड गई थी पर वे फुलपत को विदा करान के लिये तयार नही थे। बाबू ने लाचार होकर अपनी मली कुचली टोपी उनके पैरो मे रख दी थी, तब वे पसोजे थे। रो उठा था उस दिन फुलपत का हिरदय।

—“कयो लिया था उसने बिटिया का जनम ? जिसक कारण उसके बाबू की इतनी जिल्लते उठानी पडी थी—”

माई से अचरा मे गुड आर चावल का खाइचा लकर बडकी मीजी से गले मिलके वह कितनी रोई थी, पर यह घर तो उसे छोडना ही था, बेटी तो जन्मते ही भाग म पराया घर लिता कर लाती है, पास के ही मदरवा गाव म फुलपत का ससुराल था, गऊ घाट पर डोली से उतार कर उन दोना की गठजोडे से गंगा पूजइया कराई गई थी, उस समय फुलपत ने गंगा मइया से यही तो मागा था कि—

—“ओकरा सुहाग बना रहे ,

—ओकरे घर आगन मे सुख का वास रह”

समुराल के दुपार पर डाली गयी तो वह छम - छम करता हाथ म सिपारा लिये हुये समुराल के आगम म उतरी थी, ओह बिना उजास या ओहरे जीवन मे । पर आज फूलपत का हिरदय रो पडा है, विधाता ने उसके साथ म कसा मजाक किया था, उसका हिरदय कितनी जगह से चिटख चिटख सा गया है ।

समुराल मे बरिस मर क भीतर ही फुलपत की काया को मानो ग्रहण सा लग गया, उसकी सोने सी देह पर मानो किसी ने माटी की परत चढा दी हा । उसके मनसेधू नत्थू को घर गिरस्ती स कोई सरोकार न था । सारा दिन गाव म डालता फिरता और सभा बीतने पर जब दिया वाती था समय होता तो घर लौटता सो भी नशे मे धुत्त होकर । फुलपत के जरा सा ची-चप्पड करने पर सातो से उसकी पूजा करने म तनिक भी नही हिचकता । घर म कभी नून तल, लकडी का जुगाड होता कभी नही, एक छाटा सा सेत का टुकडा बचा था जिस से गुजर बसर होती थी, वह भी नशे की लत मे पडकर पसा के कारण दूसरे का बच दिया था । फुलपत सारा दिन दूसरा के सेतो म काम करती, पर तो भी पेट भरने लायक अनाज का जुगाड नही बैठता । कुछ दिन बाद जब फुलपत के पेट म नहा सा जीव कुलबुलाने लगा था, ता सूखा चहुरा खिल उठा था, उसक पील मुख पर रह रह के खुशी की लहर दौड जाया करती थी । उसम जीवन को जीन की एक नयी ललक सो पैदा हा गई थी । एक आशा की किरण सी जाग उठी थी, मन के किसी बोने म—

—शायद आन वाले जीव का धियान करके ही इसका बाबू सुघर जाये—

—“शायद इसका मोह उसके पैरा म वेडिया बन के उसे घर गिरस्ती के बदन म बाध सक”—

—पर उसका यह सब सोचना अकारथ गया । बचवा के होने के बाद भी नत्थू की जिदगी म तनिक अंतर नही आया । वह वैसे ही मुस्टडे साड की तरह मस्त होकर धूमता रहता ।

बचवा की किलकारी और विहसता मुह दटकर एक बार तो फुलपत का जी जुडा जाता, फिर दूसरे ही छण उसे दूध के लिये बिलखता देखकर उसकी आत्मा रा पडती । फुलपत की छाती मे बचवा बार - बार मुह मारता पर भूख से लडती फुलपत इतना सूख चुकी थी की उसकी छातियो म दूध न उतरता । यह सोचती—

—“बयो लाई वह उसे इस ससार में जहाँ उसके लिये दो बूद दूध भी ममस्सर नहीं है । “पर क्या इसे जन्म देने के लिये वही जिम्मेदार है पति नहीं” वह सोचती रहती, त्रिसुरती रहनी उसके सिर की नर्तन घटकने लगती ।

और उसके बाद गंगा में आई बाढ़ न फुलपत की रही सही हिम्मत को भी तोड़ दिया था, कभी सोचा भी न था कि, गंगा मझ्या इतना परलय मचा देगी पर गंगा का पानी तो अजगर की तरह सारे गाव को लीलता सा चला आ रहा था । गंगा के किनारे बसा मदरवा ही तो उसकी ससुराल थी । उस दिन गंगा मझ्या के उफनते रूप को देखकर उसने बचवा को कितना मना किया था, घर में बाहर जान के लिये पर बचवा नहीं माना था और बाबू के साथ जाने की जिद कर बैठा था क्योंकि चाह भूख हा मरीबी उन्न तो अपनी दहलीज पार करती ही रहती है, बचवा भी अन्न माई के आचल से बधा रहने वाला बचवा नहीं था, सो बचवा ने भी माई की बान नहीं मानी और वह बाबू के पीछे लग गया था ।

सभा घिरती आ रही थी, गंगा मझ्या हू-हू करती तेजी से आगे बढ़ी चली आ रही थी । वह दूर दूर तक आखे फाड़े उह देख रही थी पर उन दोनों का कहीं नामो निशान भी नहीं था । तभी चारों ओर चीख पुकार मच गई थी ।

“अरे बचवा हा, बाबू हो, माई हो, भागो भागो,” का शोर सब जगह मच गया था ।

लोगों के घरों में छाजन वह चने थे गाय उकरिया हाथ पैर फैलाये आखों में कातरता लिय पानी में बहती जा रही थी । फुलपत का बच्चा घर भी चारों ओर से पानी में घिर चुका था, वह ओसर में से पानी निकालती पर वह भरता ही जा रहा था । फुलपत भी चारों ओर में पानी में घिरी कमर तक पानी में खड़ी अभी भी दिया हाथ में लिय घाट जाह रही थी पर उस घर अधियारे में जहा चारों ओर पानी का साम्राज्य था, कुछ दिनाई नहीं पड रहा था । सेवा दल वाले नावें लकर लोगो को बचाने के लिये आ पहुचे थे । लोग पानी में डूबत उतरात हाथ हिला - हिलाकर चिल्ला चिल्ला कर उह सहायता के लिये बुला रह थे । जीने की आस में उनकी सास अटकी पडी थी, सबके प्राण मुसीबत में पड गये थे । फुलपत को पानी में डूबते उतरात देख किसी ने उसके बाल पकड कर ऊपर खींच कर नाव में चढा लिया था और विश्वविद्यालय में लाकर उसे छोड दिया था ।

एक हफ्ता तक गंगा मझ्या परलय मचाती रही, पता नहीं कितने गाव उनकी गोद में समा गये । जब गंगा का पानी उतरान पर आया तो फुलपत मन मारे हिरदय पर बाभा सा लिये अपने नैहर पहुची तो समूचा घर जैसे भाय भाय टूट गया पिजरा]

कर रहा था। बाबू माई किसी का कहो पता न था। टूटा मचान और माई की फटही लुगडिया दरकर फुलपत चीखती चिल्लाती गंगा की तरफ भागती जा रही थी और चिल्ला चिल्ला कर कह रही थी—

— 'माई हो बाबू हो, तू रहवां घाटन, अर मौजी हो मइया हो, हमरा के छोड के तू सत्र लागन कहा चलगइ न हो, अब हम कर्मे जीयव ' ?

—फुलपत भागती जा रही थी। चारा और कीचड़ ही कीचड़ थी बाबू म उमके पैर बार बार गमते पर वह फिर गड्ढी होती गिरती पडती भापी जा रही थी उमकी समूची नेह और लुग्गा कीचड़ से लथपथ हो गये थे, पर उसे रमकी परवाह नहीं थी। उसका हिरदय दुःख से लड्डुनुहान हा रहा था। आज वह अकेली थी, बिलकुल अकेली, जिस गंगा मइया न उसे भरपूरा ससार निया था उसी न सब कुछ वापस ले लिया था। उसने टूटे दिल की बिधा सुनने वाला बहा कोई नहीं था म लहरें नहीं नहीं—

फुलपत की आखा म आग बरस रही थी, वह चीख चीख कर कह रही थी —

— 'ह गंगा मइया हमार मुहाग लौटा का हमार बचवा हमके वापिस करा, हमार बाबू माई, मइया मौजी कहवा वाडेन बतावा, बतावा, हमरा के जवाब न हमार समार उजड गईल। हमरा पर इतनी किरपा और करा कि—

—इतना कहत कहत फलपत औध मुह गंगा घाट पर गिर पडी नीर गंगा की लहरा न उसे भी अपनी गोद म समेट लिया।



माटी की गध

उस दिन नेऊर चाचा मौचक मे बेटा का मुह ताकते रह गये थे, उन्हें लगा था जैसे किसी ने उनाी छती पर बस कर घूसा भाग हो । बितनी बडी बात बटो न उनके सामन कह दी थी । उन्होंने बेजब यही तो कहा था—

—“अब तू लाग सियान हो गइला, जरा -मरी गाव की तरफ भी जाये के चाही”—

—इस बात पर बेटो ने इ जवाब पकडा दिया था कि—

—“ऐ बाबू हो, हम गाव ना जाउ, हमरा से ऊहा फौजदारी ना होरवी । तोहार जो मन हो सो करा—”

यह सुनकर नेऊर चाचा की आत्मा रो पडी थी । बीता हुआ बचपन उनके सामने ठाठे मारने लगा था । गाव के चप्पे चप्प से उनका माह का बघन बघा हुआ था, और जउ तक ईया जिंदा थी, उनकी जान परान नेऊर म ही अटकी पडी थी, छोटेके बेटवा जो टहरे । बसे भी छोटे बेटे पर मा का प्रेम ज्यादा रहता है क्योंकि वह पेट पाठना होता है ।

—जब जउ बटवे मइया ईया के सामने सेत के बटवारे की बात चलाते तब वो बार बार यही कहती—

—“अब ही तो हम बटल बानी । हमार मुवे बाद हमार लाश पर बटवारा होरवी”

नेऊर चाचा के काना मे ईया की यह बात हर समय गूजती रहती, कान सन सन करने लगता, ऐसा लगता जैसे कान के अन्दर कोई कीडा रेंग रहा है । पर आज से दो बरस पहले ईया न भी तो इस ससार से हमेशा के लिये बिदा ले ली थी । गाव की चौहद्दी मे घुसने स पहले ही जब नेऊर चाचा ने ये समाचार सुना कि ईया नहीं रही तो वे सिर घाम कर बैठ गये थे, एक मोह का बघन था, जो टूट चुका था पर दूसरा मोह का बघन था गाव की माटी, जिसे वह छोड नहीं पाय थे । डेहरीआनसोन के किनारे बसा उनका छोटा सा गाव डोडन-डिहरी । शहर की चहल पहल से दूर ठेठ घञ्जर देहाती इस गाव के लोग । स्टेशन

स गाव तक जाने के लिये बँलगाड़ी रास्ते भर हेचू हेचू करती हुई मेड के घबरे से हिलती डुलती, चारो ओर कमर तक पानी में लडे घान के लहलहाते सत, जरा सा मेड चूके कि गप्प दे पानी में ही गिर पडे । कभी ता गाव पर सोन नदी की ऐसी किरपा होती है कि घान से घर कुठार कुल भर जाता है और कभी ऐसी दरिदर अकाल की छाया पडती है कि बाल बच्चे दाने दाने वास्ते तरस जाते है । कौनो कौनो बारिस तो सोन नदी का पानी आपन कुल मरजाद तोड के हू - हू करके समूचे गाव में परलय मचा देता है । सोन नदी पर बना पुल और पलेटफारम हिंदुस्तान का सबसे बडका पलेटफारम के नाम से ही लोग जानेला पर ओकरे किनारे जो मानुष मरद बसेला है, ओकरे मनोविधा आवरा दु ख, ओकरा दिन-रात गरीबी से जूझना, कौनो नाही जान सकेला ।

नेऊर चाचा अइसन ठेठ देहाती गाव में जनम लेकर भी ठेर पढलिख गये और पटना में ऊची सरकारी नौकरी करते रहे । ए गो जीप और दू गो चपरसी भी गोरमेट की ओर से मिले रहे । बाल बच्चन शहर के अच्छे से अच्छे स्कूल में पढते । ठाठ से शाम को मोटर में चडकर घूमने जात पर इन सब सुविधाओं के मिलने पर भी चाचा का मन गाव में ही मटकता रहता । बारिस में दो-तीन बार गाव जाते कबहु बडके बेटवा को या कबहु बडकी बिटिया को भी लिया जाते । कौनो पाहुन तो ये नही कि टेशन पर डोलिया कहार और बँलगाड़ी खडी रहती पैदल ही कच्चे रास्ते से गाव जाना पडता । पर एक बेर जब बडकी बिटिया सुरसत्ती बियाह में शामिल होये बडे बडके चाचा के साथ गाव गईल तो उनका रास्ता चलना हलकान कर देहलिन, बार बार एक ही सवाल करती—

— ऐ बाबू हो हमार गाव केतना दूर होई” ?

“ऊँ का समुतवा लौकत हो’

सुरसत्ती आखे फाड फाड कर ‘देखती पर दूर तक कुञ्छो दिखाई नही पडता हा खेत खलिहान जरूर दिखाई पडते । घर पहुचते पहुचते साम पड गई और जब घर के दुवार पर पहुची तो न घर में केहू के परनाम न केहू के गोड लगलस, सुरसत्ती तो घाय दे खटिया पर ही गिर पडी । सब ओर चींग पुवार मच गई । —बिटिया के का हो गईल— ऐसन हाल बेहाल काहे परी है — दादी गोड मसलने लगी और मतवा सरसो कातेल कपारे पर घर के चापने लगी ।

आज ससार में न तो मतवा है और न दादी पर उनकी ममता पियार सुरसत्ती के मन प्राण में आज भी रचा बसा हैं । इतने में ही सेर भर के लोटा में दूध लेकर नाक से माथे तक सेंदूर लगाये मइया की दुलहिन सुरसत्ती के पास आकर धम्म से बइठ गईल और कपारे पर हाथ देकर रिरियाने लगी— “अरे माई

रे ई का मइल ?' सुरसतिया के ऊपर तो महुवा के पेड का भूत चढगइल बाटे, भट से कौनो ओभा पडित बुला के भाडा मन्तर कराये के परी, नाही तो परान सकट मे पड जाई—

रात भर सुरसती बुखार म सुलगती अट सट बकती रही- गाव भर के बुल ओभा पडित भाडा मन्तर फूक कर पइसा एँठ कर ले गये, पर सुरसती का जोव ठियाने न हुआ, बुखार तो जैसे उतरने का नाम ही नहीं लेता था । मिन सहरे पालवी मे बइठा कर शहर ले जाकर बढके डाक्टर को दिखाये, तबे बिटिया की तबियत मे सुधार हुआ । नेऊर चाचा तो पहिले ही जानते रहे कि ई शहर मे रहेवाली बिटिया है, बिना दवा गरू के बुसार ना उतरी । पर मौजी और मतवा केहू का कहा माने तब तो—

बुसार उतरने के बाद तो सुरसती ने गाव के बियाह म खूब मौज ली थी । रात के समय सब मौजी, गाव की औरत चेहरे पर घू घट डालकर पैरों मे हजार पायजेब पहिन कर गोला बना बना कर नाचती, और गीत गाती—

“काठवा पर का सिपहिया र गेडूवा हमसे मागे,—
बाहर से देख रे धदर नहीं जइवे ।”

दूसरे मौहल्ले की ग्रामीण औरत जवाब देती—

“बरिहे बरस की उमरिया रे,
लाज से मरि जइवे ।”

यह बारह बरिस वाला गीत सुरसती को बडा नीक लगता, क्योंकि वह खुद भी तो उस समय बारह बरिस की ही थी, इस गीत के बोल के साथ उसके मन प्राण भूम उठते और वह भी उनके साथ गीले मे नाचने लगती ।

—नेऊर चाचा का गुस्ता सबका हलवान कर देता है ।

एक बार नहकी गुड की हडिया म फटा कपडा मे अगूरी से छेद कर करके गुड निकार के खाली । तो ओकरा जान परान सकट मे पड गइल चाचा तो ओकरे पीछे हाथ धोकर पड गये । नहकी का हाथ पकड कर उसको मुईया पर बइठा दिये और सामने रख दिये गुड से भरि हडिया, और हाथ मे डडा लेकर बइठ गये, टपटकर बोले—

—“बल ई सब गुड खो, मकोस, आज तोहरा के इ सब गुड खाये के परी, खइवू की ना । अब ही एक डटा देव, धोरी करे का सच्छन सीखत बानी, काल माटी की गथ]

दिन समुराली जइव तो हमार कुल खानदान के नाम पर बट टा लगादवू"—

न हकी डर के मार रान लगी पहन धीर धीर फिर जारा से, गुड खाती जाती और रोती जाती खात खात उठी होन लगी नाक से खून गिरने लगा । आखिर बच्ची ही तो ठहरी, इतना सारा गुड खाना बोइ उसके बस की बात थाइ ही थी, वह रोती जाती और कहती जाती—

“ए चच्चा हो अब चारी ना करव, अबकी हमरा के माफी देदहिन

बार बार इह बतिया कहती पर नेऊर चाचा ता एक बात की रट लगाये रहे कि—

“आज तोहरा के ई सत्र गुड खाये के परा, भले ही तू मुई जा”

“बडकी माई ओसारे म बइठी घट भर म ई सत्र भ्रूट बाजी दखत रहलिन । आखिर म गप्प देनी उठकर नहकी का हाथ पकरि के ओसारे म ल गइलिन और टप्प से इ सुना दहलिन ।”

“आज सब गुस्ता न हकी पर ही उतरी का,” बाल दिन बिटिया के कुच्छा हो जाई तो माये पर हाथ धर के रोव के परी”—

और इस तरह बडकी माई न नेऊर चाचा के क्रोध से नहकी को बचा लिया था वसे ता चाचा का दिल भी अदर ही अदर पसीज रहा था । आज न हकी इस दुनिया म नहीं है पर नेऊर चाचा की जाखा के सामने उसकी गुड की हडिया के सामने राती बिसूरती सूरत बार बार भूजाने से भी नहीं भूलती ।

गाव म नेऊर चाचा की बडी मरजाद रहलिन । कठिन से कठिन समस्या आने पर लाग नेऊर चाचा की सलाह लिया करते हैं वो गाव के सबसे ज्यादा पढे लिखे आदमी जा ठहरे । सबके मसीहा दिन रात सबके सुख दुख म शामिल । गाव म किसी की भी बिटिया का बियाह हाता तो नेऊर चाचा की धान की फसल का नफा उसके गाम हो जाता, किसी के घर कोई कारज पडता धान की बारी रातो रात उसके घर पहुच जाती नाई घाबी कुनबी कहार गाव का सत्तर जात के लाग किसी के बीच काई जात का बघन आडे नहीं आता । सबके लिए उनकी बहणा की धारा जनवरत रूप से प्रवाहित होती रहती । पर उही नेऊर चाचा को अपनी बडकी बिटिया के विवाह मे कितनी भ्रूटबाजी उठानी पडी थी सडका जात का ब्राह्मन और अश्वल दर्जे का मेहनती । बाप उसके बचपन म ही भगवान के प्यारे हा गय थे, सो दिन रात मेहनत करके पढाई मे

नगा रहता। चाचा उमका दखत ही रोऊ गय थ। नात रिश्तदारो गाव गात के नबही लाग इस बियाह मे आय थ, कयोकि नऊर चाचा के घर मा इ पहला बियाह पडा था, पर एन मौवे पर ननसार के लाग ही दगा दे गय। आहर तो दुवार पर पाहुन का परछन हो रहा था और दूसरी आर लोग पुलिस दरोगा लकर आ गय और ड टा तान के बोले—

“इ बियाह हम ना हाइस दव, हमहू दखन वानी कि तू व सन बिटिया का बियाह रचा लेवा”

—सत्रकी सिट्टी - पिट्टी गुम। पर नेऊर चाचा सधी दूइ आवाज म बाले थे—

“पण्डित जी आप दुवार पूजा का सारज जारी रखिय, बिटिया के तल चढ गइल हो। मटमगरा की रसम भी हो गइ है ओकरा बियाह ए ही मइवे मे अउर ए ही लगन मे ऐही लरिवा के सग होइ, वानो माइ का साल अब इ बियाह ना राव सकेला—”

—नेऊर चाचा की इ घापणा से दरागा साहब सार सिपाहिया के साथ ऊहा से फूट गय और बाद म तो ननिहाल के लोग भी पसीज गय थे, कयाकि जिस बिटिया की उहाने अपनी गोद मे खिलाया था, वही आज पराइ होन जा रही थी- यास्तव मे मनुष्य का हृदय कितना बिचित्र है, शायद इसके समान क्षण क्षण परिवर्तनशील होन वाला और कोई तत्व इस सासार मे नही। पत्यर के समान कठोर हृदय के अंदर से किस समय स्नेह और ममता का छिपा हुआ स्रोत फूट पड़े, इसे कौन जान सक्ता है ?

—नेऊर चाचा ऊपर से चाहे जितन ही कठोर हा पर हिरदय से इतने कामल थे कि बेटी का बिदा करना उनके बस की बात नही थी। गाव म किसी भी घर से जब बेटी की बिदा होती तो नेऊर चाचा की आंखे भर जाती, इसीलिय व कभी बहना के गाव भी उनसे मिलने नही जाते, कयोकि व भेटते ही पर पकड कर रोने लगती थी। फिर अपनी जाई बेटी को तो बिदा करना ता और भी कठिन था। जब बिटिया बिदा हुई तो उसकी आंखे चारो तरफ बावू जी को खाजती रही पर नेऊर चाचा लुकल - छिपत रहे कि कही बेटी के सामने उनके आमुआ का बाघ टूट न पड़े उसका चेहरा देखत ही यह फफकने न लग जाये और जब बिदा होन के बाद दो बरस तक समुराल से उसका कोई समाचार नहीं मिला तो चाचा तो ओकरे सोच म पागल से हो गय। आखिर में बेटी के बसुराणी म चिट्ठी डाल दिये केवल एक लाईन लिखकर—

माटी की गध]



“पाहुन गिरपा करके हमरा के समाचार दा कि हमार बिटिया”
है या मुव गईल’ —

चित्ठी राचन ही पाहुन बिटिया का लकर जब पहुँचे और उनके गले लगे तब जाकर वही चाचा के बनेन म ठण्डक पहुँची थी ।

इतना कामल हृदय गवन वान नऊर चाना की दृढ़ साहस्य शक्ति की मनोबल न सदा उनका साथ गिया था । उनकी जिन्दगी समस्याओं से जुद्ध कीन रही थी, सिद्धांतों की लड़ाई जारी थी घर म भी बाहर भी । जीवन में एक समय भी आया था कि नेऊर चाचा का अपनी गिरस्ती की दीवारों गिरती सी जात पडी थी, जब दाना बडके बेटवा चोरी छिपे बियाह कर लिये थे, बडके ता कोर म जाकर बियाह कर दुलहन ने आये थे आर छोटके ने आय समाजी दग म बियाह रचा लिया था । जब नेऊर चाचा को ई बात पता लगी तो वे दुहृदय माये पर मार कर रो पडे थे, गरियाने लगे थे । अपने परान देने पर उताह ही गये थे, उहे लगा था व गाव कौसा जायेग लोगो को क्या मुह दिखायेंगे, प दूसर ही क्षण उनने सिद्धांतों ने उनका डूबते से उबार लिया था, उन्होंने बर्द मस्कारा से बेटों के फेरे उनकी मनपसंद दुल्हन से करवा दिय थे । जाति बिघादरी मे अपनी पैउ पुन स्थापित कर ली थी । अपनी गृहस्थों को खण्ड - बिलख हान से बचा लिया था ।

— अपने इस कदम पर उन्हें जीवन म कमी भी पछताना नहीं पडा, क्योंकि दोनो बटा और बहुओं ने उन्हें अपना भर-पूर सहयाग दिया था और कहा था—

—“बाबूजी ! आप सब चिन्ता छोड दें, हम सब मिलकर मार समाल लेंगे— आपकी गृहस्थों का” —

इस प्रकार परिवार - गृहस्थों की समस्त जिम्मेदारी बटा और बहुओं के सशक्त कंधा पर डालकर नेऊर चाचा इतिहास लेखन के महान् काम - क्षेत्र मे अपने स्वप्न को साकार करने निकल पडे ।

उन्होंने सब न घूम घूम कर अपन सिद्धान्तों का प्रचार प्रसार किया । नई नई भाषणायें एव धारणायें स्थापित की । पुरानी भाषणायों को तब सहित खण्डन करने के लिये उन्हें विश्वविद्यालयों की बचारिव गोष्ठी म सम्मान आम त्रित किया जाता साथ ही उनके बिचारों और सिद्धांतों का पत्र - पत्रिकाओं म सर्वाधिक छापा जाता रहा ।

नेऊर चाचा ने इतिहास विधा पर अनेकानेक ग्रंथों की रचना की । भारत के उच्च - कोटि के प्रकाशकों ने भी उनके महान् ग्रंथों का प्रकाशन किया ।

इहा तक को उनकी पुस्तक की प्रतिष्ठा अमेरिका और इंग्लैंड तक जाने लगी ।
 उससे नेऊर चाचा की प्रसिद्धि विश्व के महाद्वीपों में भी फैलने लगी । उनकी लिखी
 पुस्तकों का अंग्रेजी और भोजपुरी भाषा में भी अनुवाद हो गया है । उन्हें इतिहास
 विषय के सर्वोच्च सम्मान से सम्मानित किया गया । उनकी यश, कीर्ति एवं
 प्रतिष्ठा की पताकाएँ सबत्र फैलने लगी ।

—इतना सब हो जाने पर भी नेऊर चाचा को आत्मिक शांति नहीं
 मिली । उनका मन बार बार एक ही प्रश्न पूछता—

—क्या नये सिद्धान्तों को मायता मिलेगी ? क्या इतिहासकार उनकी
 धारणाओं को स्वीकार करेंगे ?

—क्या उनके द्वारा प्रज्वलित की गई ज्ञान ज्योति का प्रकाश विश्व को
 नया मार्ग प्रशस्त कर सकेगा ? आदि - आदि बातों से नेऊर चाचा कभी - कभी
 इतने अधिक निराश हो जाते कि उन्हें अपने गाँव की माटी की याद भक्भोर
 आती ।

—घर गृहस्थी की ओर से नेऊर चाचा को कोई चिन्ता नहीं है । सब बेटे
 बेटियाँ का शादी - विवाह हो गया है । बेटे शहर में ऊँचे - ऊँचे पदों पर नौकरी
 कर रहे हैं । इतना सब होने पर बेटों की माँ बार बार व्याकुल हो उठती है ।
 रह रहकर वह एक ही सवाल करती है—

“—हमारे घर भरल - पूरल रहल । आज सब बेटवा - बेटियन हमरा
 के छोड़ के दूर चल गइल बा । हम उनका के लेकर ढेर सपना सजोले रहनी’

—नेऊर चाचा ने दिलासा देते हुए कहा— ‘काहे के हलकान होत हाऊ ।
 अब तोहार बचवा के पाख जम गइल बा । अब ऊँ ममता के पिजरे में रहे वाली
 चिरई नइले । आकर माह छोड़ि दा ।

—बट मल ही बड़े शहरों में रच - बस गये हैं उनका खेत पल्लवाना
 की ओर आई रूमान नहीं है पर नेऊर चाचा डोढनडेहरी गाँव में साल में दो -
 चार बार जरूर आते हैं ।

—ठेठ बज्जर देहाती डोढनडेहरी— जैसे गाँव में नेऊर चाचा के नाम पर
 सरकार ने वाचनालय और पुस्तकालय खोलवा दिये हैं ।

—सरकार से पत्र व्यवहार करके नेऊर चाचा ने टशन से गाँव तक
 जाने के लिये पक्की सड़क बनादी है ।

— गांव में अब राजनीति, पीजदारी घुस आई है। जरा जरा पर लाठियाँ मान और बरछी नकर लाग बिना साच समझ एक दूसरे पर करने लग जात हैं। माई - चारा और आपसी मला - मिलाप का ता मूम गया है।

—पहन जंमी बात नहीं है अर- गांव की मिट्टी में जहर सा घुल है।

—“जिसकी लाठी उसकी भैंस” वही कहावत चरिताय हा रही है। बसू सूचित और जनजाति के लाग जो यों में सवण के यहा रहकर अपने जी यापन करत रह आज उन्हें भी अपने प्राणा के लाग पड रह हैं।

—गांव के रियता में भी स्वाध का बोल - बाला सवन्न देखन में मिनता है।

—नेउर चाचा इस समय नौशक के हैं। शारीरिक शक्ति से उपरान होने पर भी उनका मन आज भी गांव की माटी से जुडा हुआ है। गांव की जमीन बेचन का रूपाल आते ही उनकी मन - स्थिति जल विहीन मछली की तरफ हो जाती है। उनके मन में अन्ह चल रहा है। वे अपनी गांव की माटी को किसी भी कीमत पर बचना नहीं चाहत हैं।

—उनका शरीर इसी गांव की माटी का एक महत्वपूर्ण अंग है।

—उनका प्राण इसी माटी के कण कण का ऋणी है। इसी माटी ने ही उन्हें पाला है पौसा है बडा किया है आर सम्मान तथा न्याति प्रदान की है।

—उनका बचपन इही मन खलिहानो में बीता है।

—इस माटी की गध उनके रोम रोम में बसी हुई है।

—उनका जीवन उनका आदश और उनका प्राण आज इसी माटी की गध का पर्याय है—

रिश्तो की लकीरें

—अभी अभी पोस्टमैन दरवाजे की भिरी में से पोस्टकाड डालकर चला गया है, पोस्टकाड हाथ में लेते ही मन शक्ति हो उठा है, काना फटा पोस्टकाड सबैत दे रहा है, कि अवश्य ही हमारा कोई प्रिय स्नेही हमसे सदा सदा के लिये दूर हो गया है, और यह शक्यता नहीं थी। लिखावट पर निगाह पड़ी— अरे यह तो मा के हाथ की लिखावट है। मन अनजानी आशका से काप उठा, शरीर में से शक्ति निकलती सी जान पड़ी, किस तरह पत्र पढ़ूँ, जी कडा करके पत्र की चार लाइने पढ़ी “मुन्नु भइया नहीं रहे आज बारह दिन हो गये”

—ओह ! यह क्या हो गया ? कभी पल भर के लिये भी ऐसा सोचा ही न था। कुछ देर पहले ही तो मैं शादी के घर से आई थी, जहाँ एक जीवन का दूसरे जीवन से गठबंधन जुड़ा था, पर यहाँ तो मेरा भइया सारे बंधन तोड़ कर इस ससार से सदा के लिये चला गया था।

मन विश्वास करने के लिये तैयार नहीं था, बार बार आँवों में आसु आते उन्हें पाछती “लाइना पर दृष्टि टालती, नहीं ऐसा नहीं हो सकता, लगना है कुछ लिखने में भूल हो गई है, ऐसे जवान जहीन भइया का क्या मौत इस तरह चुपचाप आकर शिकजे में फस लेगी, पर यह सच था, क्योंकि मा भला भूठ क्या लिखेगी ? अपने उस कलेजे के टुकड़े के लिये जिसका उ होने “मा मरे मौसी जीये” की तरह बचपन से ही अपार दुलार दिया था और अपनी ममता का रस पिनाकर पाला पासा था।

अभी दीपावली का त्यौहार बीते बहुत दिन भी नहीं हुआ है, एक मास पहले ही तो भया को जीता जागता छोड़ कर आई थी। माई दूज का टीका इही हाथा ने उनके चौड़े मस्तक पर लगाया था। कितना सुशभ था भैया उस रोज, पुलक कर बोले थे—

आज बहुत साला वाद चारो बहनों हमारे पास है, कितना अच्छा लग रहा है”

—और वास्तव में यह एक महज सयोग ही था, बचपन में एक साथ साईं खेली बहनों दूर-दूर ब्याह दी गई थी, शायद ही कभी तीज त्यौहारों पर एक जगह

इकट्ठी हो पाती थी। कितना चमक रहा था मइया का रोली लगा वह चीज ललाट और मुस्कराती सूरत, जो आसो से ओभल हो गई है, पर जिमकी स्मृति मन प्राण मे अभी भी बसी हुई है।

अबकी ससुराल आते समय कितना रोका था मुन्नु मइया ने। हलका सा बुखार ही तो था मुझे, पर ढेर सारी सलाह दे डाली थी मइया ने ट्रेन में आराम करना, चाय पीती रहना, पाव रोटी खा लेना, दवा साथ में रखनी है, सर्दी का अहसास हो तो एक गम चादर रख ले आदि-आदि। दूसरो को इतनी सलाह देने वाले मइया अपने स्वास्थ्य के प्रति इतने लापरवाह क्या रहा तमझ में नहीं आता? छाटी छोटी बातों का मइया बहुत ध्यान रखते थे।

—वह कोना फटा पोस्टकार्ड मुझे अतीत के आगम में गीच लाया है। बचपन की कितनी स्मृतियां जुड़ी हैं मुन्नु मइया के साथ—चारों बड़े मइया और उनके साथ खेलती मैं, सबसे उम्र में छोटी होने पर भी हमारे बीच उम्र का कहीं कोई व्यवधान नहीं था। दिन भर मैदान में क्रिकेट, गुल्ली डण्डा, टिन टप्पा खेलना एक दूसरे को पिदना और पिदाना। दशहरे की छुट्टियों में रात होने पर रामलीला में जाकर नक्कटइया और लका दहन देखना। मेले में मे मुखौटे और घनुप बाण लाकर उनका राम-लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न बनना और भरा सीता बनना, दिन भर उधम मचाये रखना।

मुन्नु मइया हम सबसे बड़े थे, पर सबसे बड़े हाने पर भी गमीरता उन्हें छू नहीं गई थी, वह हर समय हँसी मजाक करत रहते। जब हम लुका छिपी का खेल खेलत और मइया हमें ढूढ नहीं पात ता बार बार एक ही पक्ति बुहराते—

‘कोई हँस दे मई, कोई हँस दे।’

उनकी आवाज सुनकर हम खिल खिलकर हँस पडत और इस तरह हम पकड़े जाते।

जब हम एक साथ खाना खाने बैठते तो भी वही होड आर मस्ती का दौर रहता।

“जो पहले उठेगा वह देवता
जो बाद में उठेगा वह राक्षस”

किस तरह मइया सबसे पहले खाने अथ खाने ही उठ जाते और हमेशा देवता भी ही थोड़ी में ही आते यह चोरी हम कभी पकड़ नहीं पाय। बचपन से

ही देवता की श्रणी में आने वाले मेरे भइया जीवन के आखिरी क्षण तक देवता ही बने रहे, कोई कुछ भी कड़ता भैया निर्विकार भाव से और निश्चितता से मुस्कराते बालों में बंधी करते रहते । बहते हैं अतिम यात्रा में भी भइया के चेहरे पर वही निर्विकारता और निश्चितता का भाव था, जैसे कोई गहन निद्रा में लीन हो ।

—यादों का सिलसिला अनवरत जारी है । बाजार में चाहे कितने ही आम और अमरूद क्यों न बिकते हों, पर हमें तो अपने परपर मार-मार कर गिराये बच्ची अमिया और अमरूद खाने में ही सुख मिलता था । शाम होते ही अंधेरा घिरने पर घर की छत पर चारों भइया चढ़ जाते और बगीचे में अमरूद पर ताव-ताक कर निशाना लगाते और मैं पेड़ के नीचे से उन्हें बटोर-बटोर कर लाती । हम सब मिलकर उसके बराबर-बराबर हिस्से करते कभी कभी इस बटवारे में लड़ाई भगड़े नोच खसोट की नीवत भी आ जाती, माँ बाप की कसमें खाई जाती । एक दूसरे को मारने मरने के लिये हम चढ़ बैठते पर फिर लड़ मिठ कर एक हो जाते । इस तरह हम बच्ची अमिया और उनके अमरूदों का बटवारा ही करते रहे और हमारे बीच से बचपना कब दीवाल फाट कर चला गया इसका हमें अहसास तब हुआ, जब हम नियति के हाथों विवश होकर दूर दूर चले गये—

बचपन से ही मुझे भइया का पढ़ाई लिखाई की ओर झुकाव कम था । रेडियो, टी वी की ओर ज्यादा । इसलिये भैया ने अपने लिये यही क्षेत्र चुन लिया । पूरी रेलवे कालोनी में अपना व्यवहार तथा हुनर के कारण भैया सबके प्रिय बन बैठे थे । कोई बुलाने आता चाहे दिन हो या रात । वे समय कुसमय कुछ नहीं देखते सत्र काम छोड़कर चले जाते ।

—मुझे आज भी याद है—शादी के बाद भइया ने एक सुन्दर सा ट्राजिस्टर बना कर दिया था इधर उसके तार कुछ समय पहले टूट गये हैं, सोचा था अबकी छुट्टियाँ में जाऊँगी तो ठीक कराकर लाऊँगी, पर किसे पता था कि भइया की सासों का तार एकाएक बिना कोई आवाज किये टूट जायेगा ।

—मेरे मौसी मौसा जी के तीन बेटों में सबसे बड़े भइया "मुझे भइया" ने कभी मुझे मौसरी बहन नहीं समझा, समझने भी कैसे, जब उनके अम्मा बाबू जी ने बचपन से ही मेरा बेटों की तरह लाड डुलार किया था । मुझे पाकर उन्होंने कभी बेटों की कभी महसूस नहीं की थी । कितना चाब था उन्हें बड़े भइया के ब्याह का । रोज डाक से दजनों फोटो आते, उन्हें बँध कर छाटा जाता, कभी पास कभी दूर लडकी देखने का सिलसिला चलता रहता पर भैया कोई न कोई कोर कसर निकाल ही देते । आखिर मौसी गुम्सा होकर कहती—

“आसिर तुम्हें कैसी लहानी चाहिये ?

कोई दूर की परी तो मिलन से ग्नी

भया उसी चिर परित्रित मुस्कराहट से कहत—

“ऐसी जो इतनी कोमल हो कि चने ता मुझे उसने ---, वे ककड़ा का
धीनना पडे कि कहीं उसके पैरा म गड न जाये” ?

कमी भइया के सिर पर भवरा बठना तो कहते—' अब बहुत जल्दी ही
मेरी मनचाही दुल्हन मिल जायेगी ।

पर मौसी मौसा भइया के ब्याह की अघूरी साध लिय इस दुनिया स चल
गये । उनके जाने के बाद भइया सारा घर ऐसे मभालत, जसे कोई कुशल गृहिणी
समालती है । दोनो छोटे भाइया वो अपने हाथा स नाना बनाकर परोस कर
उहें खिलाते, घर की व्यवस्था करते भइया अम्मा बाजूजी के अभाव की पूर्ति म
लग रहते । बाहर से आये मेहमान की भी भइया बडे जार शार स आवभगत
करते । जिस तरह मौसी मुझे समुराल विदा करती बैस ही भइया भी टीका
लगाकर शगुन देकर मुझे विदा करते ।

—पर हम सबके मन म एक ही इच्छा थी कि किसी तरह भैया का घर
वस जाये ऐसी भाभी आय जो मेरे इन तीना भाइया को समाल सके और ईश्वर
न वह दिन आखिर दिखा ही दिया था ।

मुझे अभी भी अच्छी तरह याद है—मेरे अम्मा बाजूजी न बडे चाव से
मुनु भइया की शादी रचाइ थी । सालो से दूर दराज लकडी खते देखते भइया
को उसी शहर मे रमा जसी दुल्हन मिल गइ थी जो पढी लिखी जीर समझदार
थी । चार दिन पहले स ही घर म डोलक पर घोडी जीर व ने गाय जाने लग
थे । हम चारो बहनो ने आरती करके दुल्हा बने भइया को विदा किया था और
जब भाभी को लेकर कार से उतर थे जारती करक द्वार घरकर हमने भैया से
जम कर नेग लिया था । भइया मुस्कराते रहे थे और जेबें खाली करत रहे थे ।
फिर वा शुभ दिन भी आया था, जब एक के बाद एक भइया के आगन मे दा
नहें सुंदर फूल खिल उठे थे जि होने भइया के जीवन म एक नये उत्साह का
संचार किया था, उमगो से भरपूर भइया ने बडे उत्साह से हम रोक कर छठी
पूजा कराइ थी ।

याद आती है—वह बात भी, जब भाभी ने एन बार हँसते हुय कहा था—

“एव ब्रेटी हा जाये ता अच्छा है, कम स कम भाइया का राखी बाघन वाली एक बहन ता चाहिये ही”

पर भइया भट से बीन म ही बात बाट कर वाले उठे थ —

“क्या जरूरत है ? क्या हमार सगी बहन थी ? पर इन बहनो का पाकर कभी हमन बहन की कभी अनुभव नहीं की । वैसे ही य भी कभी क्या महसूस करेंगे, और भाइयो के लडकिया है, व ही राखी बागगी वही करेंगी टीया

—आन भइया इस ससार म नहीं है, उनके जाने के दा मास परचात नहीं गुडिया ने इस ससार मे अपनी आस ग्याली है । क्या बीती हागी मामी के दिल पर ? उस समय मामी के कम म नहा जीव पल रहा था । चार थप ही तो हुआ था भइया के ब्याह को । इन चार थपों मे ही भइया ने मामी पर इतना सचित प्यार लुटाया था कि थपों साथ रहने के बाद भी लोग उससे बचिन रहते है । रमा मामी को आज भी याद है—“मा ने कितने भरे मन से ब्रेटी का समुराल बिदा किया था । भइया स्टेशन तब पहुंच ही न सके थे रास्त मे ही उनकी तबीयत खराब हो गई थी । हॉस्पिटल मे इतनी दौड घूप करने के बाद भी रानी मामी के सामने देखत ही दखत भइया ने प्राण त्याग दिय थे । उस दिन अस्पताल आन स पहले हडबडी म रमा मामी ने अपनी मांग म जा सिन्दुर भरा था किस पता था कि वो अन्तिम बार मांग भर रहों है, फिर जीवन पयन्त इस मांग को रिवन ही रहना पडेगा । सब ठगे से रह गये थे । भइया की मौत ने सबको अंदर तक झकझार कर रख दिया था । उन छोटे भाइया को तो और भी अधिक जो अम्मा बाबूजी के न रहन पर एक दिन भी अलग न हुए थे, जिहान सुख —दु ख, भापी-तूफान, मुश्किलो-परेशानिया को एक साथ मिलकर भेला था उनका दीवार और दरवाजो से सिर टकरा कर रोना उनके हृदय की पीडा को और भी व्यक्त कर रहा है । सबसे छोटे उस गुमसुम से रहने वाले भइया न बडे भइया का अन्तिम सस्कार बडी निष्ठा और श्रद्धा से किया है, क्याकि उसे मालूम है कि भैया हर सस्कार बडी श्रद्धा से करते थे । सब कुछ जलकर समाप्त हा गया है, केवल रह गई है, ढेर सारी स्मृतिया ।

आज लिपाके मे राखी डालते समय हाथ रुक गये हैं, अब वह चौडी, कलाई उभर कर सामने नहीं आयगी । कलशी पर भाई दूज का टीका काढते हुये हाथ सहसा ठिठक गये हैं उस चौडे मस्तक वाल भइया की स्मृति क्या कभी हृदय से विस्मृत की जा सकती है, कभी नहीं कभी नहीं ।



रेत में दबा अस्तित्व

हाथों में ढेर सारे प्लास्टिक के आसमानी भूरे काले पाटल, फूल में लाटता आढना, नीचे जमीन में घिसटता घाघरा पहन, चेहरे पर बिखरे हुये तेज रहित छोटे छोटे बात हाथों में छोटा सा भोला लिय उसे रास्ते में, गला में, चौराहों पर कहीं भी दखा जा सकता था। आस पास के मौहल्ला के लोगों के लिये वह कोई अपरिचित नहीं थी। सभी उसके जीवन के पूर्व इतिहास से परिचित थे अपरिचित थी तो केवल मैं, क्योंकि मैं वहाँ नहीं आई थी। पर इतने पर भी मेरे और उसके बीच करुणा और स्नेह का मतलु किस प्रकार बनता गया इसे मैं समझ नहीं पाई।

—लोग कहते कि इसका भी भरा पूरा परिवार था। मात बेटों की माया यह पर एक-एक कर सब पतम हो गयी और अपनी बिसगता का दुख भोगने के लिये वह इस ससार में निपट अकेली बची थी, शायद उसी दुख ने उसे अंध विक्षिप्त या पागल सा बना दिया था। जब वह रास्ते में चलती तो बच्चे उसे पगली पगली कह कर पीछे लगते कोई उसका भोला खींचता कोई ओढ़ने का छोर पकड़ता, उस समय वह खड़ी होकर गाली निकालने लगती और कहती—

धार बाप ने रा, धारी मा न रो

म्हाने पगली कहे है हु पागल कोऽनी

वह बड़े बड़े लोगों के घर में जाकर बरामदों में बठ जाती शांत भाव से आगन में बठी रहती, खाली एक मिनट भी नहीं बठती, किसी के यहाँ नेह साफ करती मिर्ची बूटती, घनिया बूटती और लोग भी उसे बड़े प्रेम पूर्वक रोटी खाये बिना जाने नहीं देते थे। कभी वह रोटी खाती, कभी नहीं खाती और रोटिया को धले में डाल लेती और कहती—

‘अबार भूम कोनी, पच्छे घर जाऽर सासू

वह चाह किन्ती ही भूखी रहती पर कभी भी किसी से यह नहीं कहती कि “म्हाने जीमण घाल दे” बल्कि जब घर के लाग भोजन करत रहते और वह पहुच जाती तथा उसे मान करने के लिये कहा जाता तो कहती—

—पहने ये जीम लो, उरर मी जणे हू जीम नेसू अवार पेट भरिया हे—
 सब लोग उसे स्वीकार भी इसीलिय करने थे कि यह चाह बिानी ही
 तबलीफ मे क्या न हो पर किसी का एक पैसा दाना भी पाप समझनी थी। अगर
 किसी ना दया पैसा भाड़ू लगते समय उसके हाथ लग जाता ना वह उसे समला
 देनी और कहनी—

—वाई जी पारा रुपिया माम ला अटठे पडिया था चाखी तरह साम-
 तिया पच्छे म्हान ठा बोनी—

वह अक्सर मिठाई की दुकान के सामने जाकर गद्दी हो जाती पर मुह
 से कभी भी नहीं कहनी कि उसे क्या चाहिये ? बाजार म सारे दुकानदार उसे
 अच्छी तरह जानते थे। वह यह भी जानते थे कि वह कभी हाथ फँलाकर किसी
 से कुछ मागेगी नहीं। फिर वह स्वय ही उससे पूछ बैठते—

— रामी बुआ तू काइ खासी—

11763
 07-11-2001

वह मुह से कुछ न बोलकर हाथ से इशारा मर कर देती और दुकान
 दार उसकी मनचाही मिठाइ भोले मे डाल देता। और सच पूछो तो उसका
 भोला भी क्या था पूरा मनुमनी का पिटारा था। वह जिसके घर जाती वही पर
 अपने धैने म से सामान निकाल कर बिभेर देनी। उस भोले मे धन बैभव से पूण
 कोइ वस्तु नहीं थी पर उसका छोटा सा रग-बिरगा ससार उस भोले मे समाया
 हुआ था। रगीन पाटले, फूटे- हुये कप और गिलास, कुछ त्रिस्कुट, मोटी गुजिया
 एव दो लाल पीने रग के ब्लाउज यही सब कुछ रामी बुआ के उस छोटे से धैले
 मे सिमटे हुय थे। इतने पर भी वह सबके लिये उदारता का भंडार खुला रखती
 थी। कोइ उसस कुछ भी मागता, भले ही यह माग उमे चिढाने के लिये हुआ
 करती थी पर रामी बुआ भट से कह देती—

— हा थे न ला म्हार खने घणा ही पडिया है—

इतना सब कुछ होन के बाद भी लोग उसे नाम की बावली न समझ
 कर सचमुच बावली समझत थ पर मैने न तो उसे कभी पगली समझा और न
 कभी उससे व्यवहार स मुझे उसके पागल होने का अहसास हुआ इनके पीछे शायद
 यही कारण था कि मैने बावली के ब्यक्तित्व मे एक ममतापूण नारी की छवि को
 देगा था, उस स्नेह सलिला का प्रवाहित होते देखा था जो उसके सात बेटो की
 मात के उपरात भी उसके हृदय से सूख नहीं गई थी।

एक सुनिये की जखली नारी भण्डार
 भी न था, मैं बिलकुल अकेली थी। त्रासी के कारण मुझे चन नहीं पड रहा था,
 एतानय एव वाचन'नय
 रेत मे दबा अस्तित्व]

उठटा करते करन मेरी जान निकली जा रही थी उम समय उमके व हव नर
 हाथ बितनी रर तन मेरे गिर और कमर पर फिरन रह इमता मुझे पूरा घात
 नहीं, हाँ रात फिरते देग मीने उससे इतना जम्र कहा—

—रामी बुआ तू अब घर गली जा, रात होने लगी है, थोड़ी दर में
 धरग घिर जायगा फिर नेर को दियाइ भी कम पडता है—

पर वह मेरे पास ही बँठी रही मेरे बार-बार कहन के बाए भी वह अर
 जगह से हिली नहीं बरिन यही कहती रही—

नही बाट जी ये लक्ला हो,

धारा शरीर ठीक कोनी,

मैं थाने छोड कीकर जा सबू हू

म्हान जाणु बास्म मत कहो बाए जी,

हू धारे मन्न बँठी हू । '

मैं भी उसकी इस जिद के आगे हार मानकर लस्त होकर पड गई
 वैसे उस शूयता म उसकी उपस्थिति से एक सुखद अहसास तो मुझे हो ही र
 था और आखिर वह तभी घर गई जब घर पर लोग जा गये और मुझको औ
 लोगो ने सभाल लिया ।

इस ससार म सार रिश्ता नातो के हुये भी कमी कभी बाबली अपने क
 बिलकुल अकेली समझती थी अक्सर वह कहती

म्हारी चाकरी कूण कर सी—

— पर मनुष्य कुछ साधता है ऊपर बँठा विघाता कुछ जीर जाल बुनता
 है । मैं ही कब जानती थी कि अब की गर्मियों की छुट्टियों म जब बाहर से लौट
 कर आऊगी बाबली मुझे दखन का नहीं मिलेगी । बहुत दिना तक मेरी आंखे उसे
 गली मे सडक पर तलाश करनी रही पर जब कही भी दिखाइ न पडी तो मैं
 उसके बार मे पडासियों स पूछा उनम उसके दुखद अत की जो गाथा सुनी
 उसस मरा राम रोम अर तक आइ हो उठा—

—वह जून मास का सबसे गम दिन था । सब धरो मे आराम कर रह थ
 पर वह घूप मे ही घर स निकल पडी, और जगल की आर चल दी, चलती गई

"काएक तेज आधी आइ, आधी भी ऐसी घूल से मरी वाली पीली, जिसमें हाथ
 को हाथ भी दिराई न दे उसी म वावली रास्ता भूल गइ, मटक गइ बावली उन
 रेतो न टीवों म । रात भर 'खँ - खँ आधी चलती न्ही, किसी डरावने दु स्वप्न
 की तरह सवेरे जब सन शान्त हुआ तो बावली का सम्पूर्ण अस्तित्व उन रेतोले
 टीवों में दफन हा चुका था और प्रकृति ने अपनी आत्मीयता के उपहार स्वरूप
 उसे रत की मोटी चादर से ढक दिया था ।



सिमटता दर्पण

टोन से आटे का कटोरा निवालते - निवालते हाथ सहसा ठिठक गये हैं, शहनाइयो की गूज कानों के पास गूजने लगती है, यह तो वही बटोरा है, जो नानी ने भात भरते समय वादाम, मेवा, मिथ्री, से भरकर दिया था, यही तो निशानी उनकी बची है मेरे पास। मेरी विदाइ के समय का स्नेहित स्पर्श जिसकी अनुभूति आज भी मेरी अंतरात्मा में जीवित है मन का कोर कोर आसुओं से भीग उठता है, कानों में वही चिर परिचित फटकार सुनाई पडने लगती है—

— अरे वहा जा कर मर गई बिट्टी, कब से याली में खाना परोसा पडा है,

पर तू खेल में ही लगी हुई है,

—इतनी बडी हो गई हर समय लडको के साथ खेलती रहती है,

अरे उहे तो यही रहना है पर तुम्हे तो पराये घर जाना है—”

नानी जोर - जोर से बडबडाये जा रही थी, वैसे तो वह बिट्टी को बहुत प्यार करती थी हर समय अपनी जाखो के सामने देखना चाहती जरा सी दर भी उनकी निगाहो से ओझल रहने पर सारा घर सिर पर उठा लिया करती थी कि—

“तू तो बिट्टी को बिगाड कर ही दम लेगी।”

—पर सच तो यह है कि अपने लाड प्यार से मुझे सिर पर नानी न ही चढा रखा था। वह सामने बैठकर घटो मुझको निहारता करती और बार बार एक ही बात कहती—

—गगा की ओर अकेली मत जइयो, लडकी की जात है जमाना ठीक नहीं, कल को क्या हो कोई ठिकाना थोडे ही है —

—लेकिन मैं जिद ठान लेती— “कयो नानी सुम हम वहा जाने से बार बार कयो टोका करती ही, बतावा न क्या वहा कोई भूत रहता है ? नानी कहनी—

—तू नहीं जानती रे, वहा एक सिद्ध साधु का थाप लगा है साल में एक बार गगा जरूर बलि लेती है, आज के पडे - लिसे लोग मल ही इस पर

विश्वास न करे पर यह घटना आज भी सच है, जितनी पहले थी—

हमारी उत्सुकता का बाध टूट पड़ता । चारों ओर से नानी को घेर कर हम सब भाई बहन बठ जाते और कहते—नानी पूरी बात बताओ न, क्या हुआ था ? सिद्ध साधु ने क्या श्राप दिया था ?

हमारी इस जिद ने नानी को बुर अतीत के आइने में झांकने को विवश कर दिया और नानी सिमटी स्मृति की पत्तों को उधेड़ते हुये कहने लगी—

—मैं उस समय नई नई ब्याहता घाई थी, तुम्हारे नाना की नदी किनारे का यह पलाट बहुत पसंद आया था, जहा तुम लोग आज बठे हो । इस जगह को पहली बार देखकर ही तुम्हारे नाना का मन रम गया था । आस पास के लोगो ने बहुत मना किया था कि यहा हर साल बाढ आयेगी, परेशानी उठानी पडेगी पर नाना ने यहा मकान बनाने का विचार पक्का कर लिया था । वे विश्वविद्यालय में काम करते थे । मकान बनना शुरू हो गया था ।

विश्वविद्यालय से गगा जाने का रास्ता हमारे घर के सामने होकर जाता था । झुड के झुड विश्वविद्यालय के लडके हर राज गगा जी में नहाने और तैरने के लिये जाया करते थे । उसी घाट पर एक साधु महाराज गगा के बीचो बीच ऊँचा मचान बनाकर रहा करते थे । एक दिन वो पूजा में बठे थे, तभी घरारती लडको का झुण्ड आया, और उनको परेशान करने लगा धार धार लडके तरते हुए आते और उनके ऊपर पानी उछालते, उनकी हँसी उडालते, अत में तग आकर साधु महाराज ने आंखे खोली और कहा कि—

“तुम लोग इस तरह मुझे परेशान कर रहे हो, मैं तुम्हें शाप देता हू कि तुमसे से कोई न कोई लडका साल में एक बार जरूर यहा डूवेगा ।”

आज वो साधु नहीं है, पर उसका दिया शाप आज भी बेकार नहीं हुआ है । यह काशी नगरी है जहा का ककड भी शकर है । यह बम भोले का दरवार है ।

यह कहते कहते नानी भाव विभोर हो उठी, श्रद्धा से उसके दोनों हाथ जुड से गये थे,

रात बहुत हो चुकी थी, हम सब भाई बहन उनके आस - पास लुडक चुके थे ।

बसन्ती नानी के इस घर में ही हम लोगो का बचपन बीता था । बाबूजी ठहरे

सरकारी नौकर, अबसर दोरे पर रहते, पढ़ाई के कारण विश्वविद्यालय पाम हान के कारण मा हम लोगो को लेकर यही रहा करती थी। गंगा म बाढ का आना तो हर साल का नियम था, किनारे वाला घर जो ठहरा। जब बाढ आनी और विखराल रूप घर लेती तो हम लोगो को मकान छोडकर दूसरी जगह जाना पडना पर नानी घर छोडकर कही न जाती, भला जाती भी जैसे, इसी घर म ता उनके मन प्राण बसे हुये थे। नाना के न रहन पर उनकी एक मात्र निशानी म यह घर, जिसको उहोने बडे चाव से बनाया था, उसी घर मे सम्पूर्ण परिवार फला फुला था, वच्चे छोटे से बडे हुये थे। दोनों बेटियो के ब्याह म कसा ठाठ - बाठ सा रचाया था, उन्होंने रास्ते भर रुपयो की बौछार की थी, साक्षान विश्वनाथ जैसे दामाद उन्हें मिले थे। अपने सारे अरमान उहाने जम कर निकाले थे, पर घर बनने के बाद नाना बहुत समय तक जीवित न रह सके थे, उनके पैरो को लकवा मार गया था। विश्वविद्यालय के अस्पताल मे इलाज करवाने के बाद भी उन्हें बचाया नही जा सका था।

—कसा हा—हाकार मच गया था, सारा निर्माण काय जस का तस पडा रह गया था।

—नाना ओवरसियर जो थे, सब जगह शोक की लहर फैल गई थी सारा विश्वविद्यालय शोक मना रहा था। नानी के दु ख का पारावार न था।

—अपने दोहिते की अछूरी साध लिये नाना इस दुनिया से चले गये थे।

उसके साल मर बाद जब मुनु भइया का जन्म हुआ तो मौसी को ऐसा लगा—जैसे सौरी घर मे नाना उनके सिर पर हाथ फेर कर जा रहे हैं। शायद उनकी अतृप्त आत्मा कही आस - पास ही मटक रही थी। उसके बाद फिर कभी वो सपने मे भी नही दिखाई दिये।

—पर एक बार जब बाढ ने भयकर रूप धारण कर लिया और ऐसा लगा कि अबकी बार यह घर बाढ की लहरो को सहन नही कर पायगा। तब चसती नानी के लाख मना करने के बावजूद भी बडके भया ने हलकी फुलकी सी नानी को गोद मे उठाकर नाव पर चढा दिया था। दूसरी जगह जाकर हम सब भाई बहन तो खेल मे रम गये थे। मा रसोई बनाने की तैयारी म जुट गई थी, पर नानी का मन अपने घर मे ही अटका रहा, बार - बार एक ही रट लगाती—

— 'चल मुनी, एक बार घर देस आये, कही कोई दीवार तो नही गिर गई कही चोर कुछ उठाकर तो नही ले गये'

—जाने का मन न होने पर भी नानी की बात तो रखनी पड़ती । चारो ओर पानी ही पानी कमर तक पानी में चसकर मैं और नानी घर पहुँचते हैं, पर यह क्या सीढियों से अदर जाने का रास्ता रुक गया है, किसी तरह दुमजिले पर लिडकी के सहारे चढकर छत से आगन में वृद्ध पड़ती हूँ । नानी बडबडाने लगती है—

“अरी तुम्हें इस तरह ऊपर से नीचे वृद्धने को किसने कहा था ? अगर तू हाथ पैर तुड़ा बँठी तो तेरे से शादी कौन करेगा”

—वही नानी के गले में बाँधे डालकर भूल जाता हूँ

“अरे नानी तुम्हें छोड़कर कौन जायेगा ?”

चारा और अयाह जल राशि, निजन टापू जैसा घर और नानी की गोद में सिर छिपाये मुन्नी का मन आज भी अदर तक भोग सा उठता है । नानी के सिमटे सिकुड़े झुर्रियो भरे हाथ देर तक मेरे सिर पर फिरते रहे ।

—अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में नानी किस प्रकार परवश हो गई थी इसकी व्यथा क्या शायद ही कोई समझ सके ।

एक के बाद एक अपने निकटतम सबंधियो की मौत से नानी को मावात्मक डेस लगी थी, वह कही दूर अदर तक चिटखती सी चली गई थी ।

हर बार उनके दिल पर खरोच अपनी लकीर छोड़ती गई । पहले बड़े दामाद की मौत और उसके कुछ ही साल बाद बड़ी बेटे की असामयिक मौत ने नानी को झकझोर कर रख दिया था ।

नानी पक्षाघात का शिकार हो गई थी । उनके हाथ पैर बिलकुल बेकार हो गये थे । दिन रात बिस्तर पर पड़े-पड़े ऊब जाती, आवेश में आ जाती, अपने बालों को नोचने लगती, ऊट - पटाग बकने झकने लगती, भगवान से मौत की भीख मागती और एक ही वाक्य बार बार दुहराती

—क्या यही दिन देखने के लिये मैं जिंदा हूँ ? हे भगवान, मुझे मौत दे दे” —

पर क्या कभी मौत भी मागे से मिली है । देह का भोग तो उन्हें ही भोगना था ।

—मा छाया की तरह हमेशा उनके साथ रहती । अक्सर नानी चिड़चिड़ा कर मुझे मे आकर दवा नहीं म्पाती तो भा के धीरज का बाध नहीं टूटता, कितनी मानसिक और शारीरिक यत्रणा सही उहाने अपने प्रतिम समय मे ।

—आज जब उनकी मृत्यु का समाचार मिला तो बहुत दर हो चुका है । समय पर समाचार नहीं मिला कि उसे पुराने घर म जहा बचपन बीता था, जाकर दो दू द आंसु बहा सकू । छुट्टिया म जाने पर उस घर की बिना रतिग सीढ़िया चढते समय बार बार नानी का निस्तेज चेहरा अतीत के आईने म सिमट कर रह गया है । नानी का भुरियो भरा चेहरा सामनेआता है, आखो से आसुओं की धारा बहने लगती है ।



अभिशापित

आज तीन दिन के बाद घेदू घर लौटा है, पता नहीं बेचारा कहाँ - कहाँ भटकता रहा है। बार-बार माँ की आँखें पनीली हो उठती हैं, बाबू कहने कुछ नहीं, सिर पर गमठा लपेटे उसे गाँव की गलियों में खोजते रहते रहे हैं। तबरे से उसने कुछ खाया भी है या नहीं कौन जाने? जब घर पर ही नूखा प्यासा पड़ा रहता था तो बाहर बिना जाने माने उसे रोटी कौन त्रिना देता? घर खाते ही घेदू को नहलाया धुलाया गया है सो भी जबरदस्ती, घेदू के सारे कपड़े मिट्टी, कीचड़ से सन है, न जाने नहीं कितनी सम्बी यात्रा करके आया है, पाली परोसते ही घेदू उस पर ऐसे दूट पड़ा जैसे पता नहीं कितन दिनों से भूखा था। माँ बार - बार कहती रहो—

अरे घेदू घाटा धीरे धीरे रोटी खा, इतनी जल्दी जल्दी क्यों हाय घला है? " पर घेदू ने पाली भी एक हाय से कसकर पकड़ रखी है कही कोई परसी हुई पाली उमके सामने से खींच न ले और जैसे वह तीन दिनों से भूखा भर रहा है वही भूख आज भी निकालनी पड़े।

—घेदू को घर म रखन के लिये न जाने कितने - कितने उपाय किये थ, मन मे यही डर बैठा हुआ था कि घेदू अगर घर से बाहर निकल गया तो जगल में कही रास्ता भटक जायेगा और उसका वापिस घर लौटना मुश्किल हो जायेगा।

—उस दिन जब दोपहरी मे गया घेदू आगे ही आगे बढ़ता जा रहा था तो हैडमास्टर साहिब ने स्कूल से निकलते समय उसे देख लिया था।

—मई का पहला सप्ताह था धरती ऊपर से नीचे से दोनों तरफ से तप रही थी।

—वार्षिक परीक्षा के बाद बच्चों की छुट्टी हो गई थी और स्टाफ के लोग परीक्षा-फल तैयार करने मे लगे थे।

बारह बजे छुट्टी होने पर जब हैडमास्टर साहिब घर जा रहे थे उन्होंने देखा कि घेदू इतनी धूप मे पसीने से नहाये जगल की ओर रहा है।

रूखा गाँव के अन्तिम छोर पर था, यहाँ न जंगल की आर पगडंग जाती थी। हैडमास्टर साहब घेदू को तथा उसने बाबू का अच्छी प्रकार जानते थे। बहुत पुराने पर भी घेदू रुका नहीं था, चलता जा रहा था तब हैडमास्टर साहब ने लपक कर उसे पकड़ लिया था। उम्र समय उनसे बूढ़े हाथों में न जान कहां से इतनी शक्ति आ गई थी? उससे पहले य उस जंगल में घुम उन का लड़का का हथ दंग चुने थे, जो भूय - प्यास से तड़प - तड़प कर उस जंगल में ही समाप्त हो गये थे। य नहीं चाहते कि ऐसी ममस्वशी घटना की फिर पुनरावृत्ति हो। इसलिये वे जबरदस्ती घेदू को अपने साथ पकड़ कर घर ल भाय और घेदू के बाबू से कहा—

—“इसे बांध कर रखो, बाहर मत जान दो, कहीं रास्ता भटक गया तो भूखा प्यासा जंगल में प्यास से तड़पता दम ताड़ दगा ?”—

—उसके बाद कई दिनों तक उसे खेजड़ी से बाँध कर रखा गया। बाँधा भी किससे गया उस लोहे की जजीरो से, जिससे गाय डगरे बाँधे जाते हैं। वह कोई पशु तो नहीं जा उसे इस तरह साकल से बाँधकर रखा जाये। पर घेदू तपती दोपहरी में भी दिन रात लाह की जजीरो से जकड़ा रहता उसके शरीर में जगह - जगह साकल की रगड़ से घाव हो जाते, उस दखते डर लगता। घेदू की आँखा की पुतली चौड़ी होकर ममावह रूप धारण कर लेती, वही पर उस चाय, दूध, दग सब चीज दी जाती। घर के सार बच्चे उस घेर कर ऐसे बठे रहते जैसे सकस का कोई अनोखा अजूबा प्राणी हो। घेदू हर आने - जाने वालों के हाथ जाडता, आँसों में अनुनय विनय लिये, हर एक के साथ अपना रिश्ता जोडता, खोलन की प्रायना करता और कहता रहता—

“मा म्हने, एकर खाल दे, — मौसी म्हाने एकर खोल दे,”

काकी म्हाने एकर खोल दे”

—पर उसे खोल कर आफत कौन मोल लता। साकल खुलते ही तो वह सारे घर में उबल पुबल मचा देता। उस दिन जरा सा जेठ जी का भाग्रह मान कर छोटे भाई की बहू ने साकल खोल दी थी, तो घेदू ने सारे घर को उलट पुलट कर रख दिया था। दूध वही सब गिरा दिया। रसोई घर से अपने आप राटिया उठाकर सबको बाट दी। घर में बहुत सी गायें थी, उसने उनके बछड़ा को खाल दिया और बछड़े गाय का दूध चुग गये। शाम के समय जब दुहारी का समय हुआ तो गाय के दूध से बालटी चौथाई ही भर पाई। तब मालुम पडा कि घेदू ने सब बछड़ा को खोल दिया और वे सटासट दूध चुग गये थे। पता नहीं उस पगले

के लिये म पशुआ के प्रति ममता का यह ख्योत बहा छिपा था कि बछड़ा का भी भरपूर दूध मिलना चाहिये ?

—जब घेदू का दिमाग ज्यादा खराब होता तो वह रातभर नींद भी नहीं लेता, सारे दिन घर में नाचता - बूदता, जरा सा घर वाला की नजर चूकते ही घर से बाहर निकल जाता। कभी कभी चौंराहा पर कपड़े उतार कर नाचने लगता। लेकिन इतने पर भी घेदू किसी से दुव्यवहार नहीं करता।

उसे देखकर औरता का भय नहीं लगता था, क्योंकि वह दिमाग खराब हान पर भी औरतो को कुछ नहीं कहता था। पर दुनिया भर की उल्टी सीधी बातें वह बकना रहता। एक शब्द पकड़ता तो बार बार वही शब्द दुहराता रहता।

एक दिन सवरे - सवेर उसका थाड़ा कम दूध पीन को मिला ता उसने कटौती शब्द पकड़ लिया और उस शब्द का एसा पकड़ा कि सारे दिन कटौती-कटौती ही करता रहा

—“पाने म कटौती पीन मे कटौती, कपड़े म कटौती, दूध म कटौती, आ कटौती चाई चीत्र हुवे है, म्हाने समझ पडी कोनी ?”—

पता नहीं ईश्वर न उसके दिमाग की मशीनरी म क्या कटौती कर दी थी कि अनेक डाक्टरों से इलाज करान के बाद भी वह ठीक नहीं हुआ था।

कुछ महीना के लिये उसे राचो के म टल हास्पिटल म भी रक्खा गया था पर वहा उसका दिमाग और खराब हाता गया था। धबराकर घर वाले उसे वापस ल आये थे।

लेकिन घेदू हमेशा पागल जसा आचरण नहीं करता, साल के कुछ महीना म ही उसे पागलपन का दौरा पडता, शेष समय म वह मेहनत मजदूरी करता है, अपनी गायों को सभालता उह चारा देता, पानी पिलाता, सबके घर बधी का दूध देकर आता।

महीने के शुरू में उनसे रुपया की उगाही करके लाता, बाजार म गाडा खीचता, बारिया को गाडे पर लादकर लोग के घर पहुंचाता, रोज बीस पच्चीस रुपया मजदूरी करके लाता पर माँ और बाबूसा को छोडकर किसी के हाथ म रुपय नहीं देता। मागने पर पराया घन पराया घन कहके अपना पीछा छुडा लेता है।

घट्टू व घर वालों भी बम दुगो नहीं। ईश्वर पर उनकी बड़ी आस्था है पर पता नहीं, ईश्वर ने उन्हें यह दुःख क्यों दिया? उनकी आशा कि सामन उनका घटा सिर धुनता रहता है, पर वे कुछ नहीं कर सकते कोई उपाय नहीं इसने सिखाया कि उस बांध कर रक्षया जाय। घट्टू की बातें चलत ही उनका घसा रुध जाता है, आंग भर आती है और व अतीत के उन साया म खो जाते हैं

जब घट्टू के सिर पर भी सेहरा बघा था। एक ही घर म घट्टू और उसके बडे भाई का ब्याह हुआ था। वे दो बहन थी और य दो भाई। उस समय घट्टू मुश्किल से पट्टू घरस का रहा हागा। कितन भले लग रह थे दाता भाई, जैसे साक्षात राम लक्ष्मण की जोड़ी उह देखते ही आंखे जुटाती थी।

अक्षय तृतीया का शुभ मुहुत था विवाह का, शायद इसलिय कि विवाह का यह बधन भक्षय रहे। दातो भाई घाद सी दुल्हन लिय घर लौट रहे थे। और घर के सभी लोग उनके स्वागत के लिये उमड पडे थे। सब काम बडी ही अच्छी तरह सम्पन्न हो गया था पर पना नहीं दूसर दिन मे ही घट्टू गड बड करने लगा।

ज्यादा दिमाग खराब होने पर उसकी छोटी उम्र की दुल्हन को भी उसके सामने आने म मय लगता। कितनी बार घर वालो न कोशिश की कि घट्टू अपनी उस नई नवेली बहू से एक बार मिल ले, शायद उसकी प्रणय धारा म डूबकर घट्टू पागलपन से उभर जाये, उसका मस्तिष्क ठीक काम करने लग पर सब व्यय हुआ। दुल्हन के सामने पडते ही घट्टू पत्ते की तरह कापन लगता।

कुछ दिन तो वह भी घर मे आती जाती रही। सामजस्य बठाने का प्रयास करती रही पर धीरे - धीरे उनके रास्ते अलग होते गये।

उसके जीवन मूल्य बदलत गय और उसन अपनी दुनिया अलग बसा ली।

पर घट्टू के अवचेतन मस्तिष्क मे अभी भी उसकी तस्वीर बरकरार है, उसका नाम आते ही वह चीख चीख कर आक्रोश प्रगट करता है, उल्टी सीधी गाली निकालता है।

लकिन घट्टू अब अकेला रह गया है उसके साथ ब्याहे भाई का परदेश म अच्छा तासा कारोबार जम गया है, लडके बच्चे बडे हो गये हैं, जल्दी ही घर म उनके ब्याह की धूम मचेगी पर घट्टू हमेशा अकेला ही रहेगा और रहेगा नि सग।

गाय गोरू के बीच बैठा सेजडी मे बघा, आखा म याचना लिय हर आने
जान वाने से हाथ जोड कर बहवा रहगा—

“माँ म्हान एकर खाल दे,

मौसी म्हान एकर खोल दे ।” —बाकी म्हाने एकर खोल दे”



आत्मव्लानि

कमी - कमी सोचती हूँ, कितना अनय हो जाता उस दिन अगर मैं जमुना के ऊपर चोरी का दाय लगाकर उसे पुलिस के हवाले कर देती। अबे साल-पीली करके बच्चा से भी कई बार पूछा था उसके घर की तलाशी लन तक की मैंने ठान ली थी, न जान कितनी आगल बातें उसके बारे में बड़ डाली थी-

‘बड़ी सती सावित्री बनी फिरती है, अरे ! मुझे तो पहले से ही पता था, य काम करने वाली औरतें पहले मलमनसाहत का ढाग रचती है बाद में बड़े माल पर हाथ साफ कर देती है’—

—पर मेरे इतना कहने पर भी मेरे पति के घीर गम्भीरस्वभाव में तनिक भी अंतर नहीं आया था, वो बार-बार यही कहत—

“शायद मने भूल से कही रख दिया हा”

मामला तूल न पकड ल मेरा गुस्सा उग्र रूप घर के कही किसी के भविष्य का अघकार मय न कर दे, शायद इसीलिये वे बार-बार यह वाक्य दुहरा रह थ —

“पहले अपने घर में हर तरफ देख लो वे वजह किसी पर शक करना ठीक नहीं’

—शायद वो इस बात को भी जानते हैं कि अगर चीज वापिस घर में ही मिल गई और जमुना निर्दोष ठहराई गई तो आत्मव्लानि के कारण मेरे आसुओं का इतना अधिक संलाव बहेगा कि उसे रोकना मुश्किल हो जायगा ।

—मैं भी कमी-कमी स्वयं अपने से ही प्रश्न पूछती हूँ,

—आखिर ऐसा क्या होता है ?

—क्यों हम छोटी जात वाला को इतनी जल्दी सदेह के घेरे में ले लेते है ?

—क्यों घर में चोरी होने पर पहले दोष उही पर लगाते हैं ?

—शामद इसलिये कि उन्होंने निम्न कुस में जन्म लिया है, पर यह कोई पाप तो नहीं है, यह ऊँच-नीच की दीवार तो स्वयं हमने सजी की है ।

—असल में दखा जाये ता वान कुछ भी नहीं थी, यही लीवासी का खोँहार था । घर में नात रिश्तेदारों का आना-जाना लगा हुआ था । गादरज की अलमारी में से निनाल कर पहनने के लिये गहने रखे थे और सब तो पहन लिये थे पर हाथों से पक्वान के लिये आटा गूधना था इसलिये व्यस्तता में कगन पहनने का समय ही नहीं मिला । सध्या की जब कही बाहर जाने का प्रोग्राम बना तो कगनो की याद आई ।

—मुझे ठीक याद था, मैंने ड्रेसिंग टबिल पर ही कगनो की जोड़ी रखी थी, पर वहा से कगन नदारद थे, घर में आय गय सब विश्वस्त थे, मेरा ध्यान बार-बार जमुना की ओर जाता, वही इस कमरे में सफाई करने के लिये आई थी, उसके सिवा दूसरा कोई कगन ने ही नहीं सकता, मेरा मन बार - बार उस सदेह की गिरफ्त में न लेता ।

मैं परेशान थी किसी भी काम में दिल और दिमाग नहीं लग रहा था । धीरे - धीरे करत पन्द्रह दिन बीत गये कभी सोचती प्रब क्या होगा ?

—अगर नहीं मिले कगन ता कैसे बनेगी दूमरी कगन की जाड़ी । गहन ता विपदा के साथी होते हैं, जब अच्छा समय था, तब कितने कम रूपों में बन गये थे, अब तो महगाइ सुरसा की तरह मुह बापे सडी है, ऊपर से आये दिन के खर्च—

—सोते समय भी सपन में वही कगन की जोड़ी दिखाइ पडती । जहा नजर डालती कगन ही कगन नजर आते । दूर से लगता वही सोन के कगन चमक रहे हैं रास्ते चलते किसी को हाथ में बैसे ही कगन पहने देखती तो कलेजा मुह को आ जाता । काश कगन कही घरे मिल जाते ।

—दिन बडे तनाव में गुजर रहे हैं जमुना भी काम करने नहीं आ रही थी । उसने कहा था कि

“उसका रूचा बहुत बीमार है, छत से गिर गया है, उसका हाथ टूट गया है, एकसरे कराना है, अस्पताल में भर्ती कराना है, कुछ रुपये भी मागे थे

—पर मैं तो उसने ऊपर भरी बँठी थी । बच्चे की बीमारी को भी उसके नजर घुराने का बहाना समझ बँठी थी, जो आता उससे मैं यही कहती—

“न हा जमुना ने ही बगन लिय है, तमी तो बच्चा को बीमारी का बहाना बरके नहीं आ रही है, आखिर आयेगी मी किम मुह स। अरे ! झूठ के पांव षोडे ही होते हैं, मेरी ही गलती थी, जो मैंने उस पर भरोसा किया—”

मेरी इन बातों पर लोग आश्चर्य बरतते थे क्योंकि जमुना किसी क लिये नई नहीं थी। वह सात बरस से हमारे यहा काम कर रही थी, कमी किसी ने उसमे कोइ ऐसा बसा ऐब नहीं देखा था पर मरे मन म जो सत्तेह का सप उसके लिये घुसकर बठ गया था, उसने अपनी पठ बहुत गहरी जमा ली थी और उसी का विष बमन मेरे शब्दों के माध्यम से व्यक्त हो रहा था।

धीर - धीरे शीत ऋतु भी अपनी गुलाबी सर्तियों को लेकर आन लगी थी, एक दिन जब मैं सर्तियों में पहनने के लिये कपडे निकाल रही थी और उन्हें धूप दिलाने के उपक्रम में थी, उसी समय साड़ियों की तह करते समय अचानक जरी की लाल रंग की साड़ी तह समेत नीचे आ गिरी। तह खुलते ही उसमें सहेज कर रक्खे गये सोन के कगन चमकते दिखाइ दिये। एकाएक आँखों के सामने सारा दृश्य धूम गया, उस दिन लक्ष्मी पूजन के समय मैंने वही लाल रंग की साड़ी पहन रक्खी थी और जल्दी बाजी में काम की व्यस्तता में मैंने ही कगनों को साड़ी में लपेट कर रख दिया था। आज जब वो कगन मिल गये लगा सारी थकान जाती रही, मन मयूर नाच उठा ओह ! कितनी बड़ी चिन्ता दूर हो गई।

—पर एकाएक मेरी आँखों के सामने बार बार निर्दोष जमुना का चेहरा धूमने लगा। उसका बार - बार हाथ जोडते हुये ये कहना—

—बाइ जी हूँ थारो पाटलो लिया कोनी मैं म्हारे दाना छोरा र माये पर हाथ घर कटूँ हूँ कि हूँ थारा पाटला आरूया से देख्या ही कोनी ?

—किन्तु मेरे ऊपर उसकी इस विनीत मुद्रा का कुछ भी असर नहीं हो रहा था मैं उस लगातार धमकिया दिये जा रही थी। कितना बीमार था उसका बच्चा उस मर-मर कर नई जिदगी मिली है और मैं उस चार समझे बँठी थी। इसी गुस्से के कारण मैंने उमे इलाज के लिये रुपये भी नहीं दिये थे। वह बेचारी काम तो हमारे यहा करती थी। रुपये मागने और कहा जाती ?

—जमुना को अपने बच्चे की जान बचाने के लिये गलत लोगों का साथ देना पडा था क्योंकि रुपये मिलाने का यही एक रास्ता बचा था। शायद उसका गलत रास्ते पर डालने वाली मैं ही थी नहीं तो वह ता जी तोड मेहनत मजदूरी करके अपना गुजर बसर कर ही रही थी।

मे आत्मग्लानि से भर उठी, तकिये मे मुह छिपाये न जाने कितनी देर तक सुकती रही पति के घर आते ही सबसे पहले मैंने यही शब्द कहे—

—देखो न मुझमे कितनी बड़ी गलती हा गइ । कगन मैं ही साडी की तह म रखे ये । आज एकाएक आलमारी सहेजते हुये मिल गये मीने उस बेचारी पर वेकार ही दोष लगाया ।”

वे बड़ी ही सहजता से बोले— अब पिछली बातें मूल जाओ, चलो हम उसके घर चलते हैं, उसके बच्चे को देखकर आयेंगे । उसको काम करने के लिये जाने का कहेंगे—

—ओर वास्तव मे जैसे ही हम उसके घर पहुचे और उसको कगन मिलन की खबर सुनाई तो वह खुशी से गद्गद हो उठी । ऐसा लगा जैसे उमकी खोइ हुइ चोज वापिस मिल गइ है । उसे कुछ भी याद न रहा कि मैंने कितनी खरी खोटी सुनाइ थी उसे । मैंने ही आद्र स्वर मे कहा—

जमुना मुझसे बड़ी भारी गलती हो गई, मैंने तुम्हारे ऊपर दोष लगाया ।”

वह बड़ी सहजता से बोली— जावण दा वाइ जी, अब ता मिस ग्या, म्हारी बघाई पक्की ।”

कमी - कमी मैं सोचती हूँ, अगर उसके स्थान पर कोई और होती तो उल्टे कितना सुनाती मुझे, कितनी लानते भनानते मिलती, पर जमुना ने सब कुछ बड़ी सहजता से लिया था ।

उस दिन मैंने सावली सी दीन हीन सी दिखने वाली उस नारी के अन्दर उस निष्कपट आत्मा के दर्शन किये थे, जिसकी ज्योति के आग दीवाली के दियों की चमक भी फीकी पड गई थी ।



आशका

अद्धविदिप्य मस्तिप्य यत्रजानी हरजतें, रण्डमुड बापा को तिय इत ससार म उसे ता रहता ही था । विमा हर समय पागना जगा आचरण करती, पर काम म गुपचाप लगी रहती, काई कुछ बोलता तो मारने को दौडनी, उसको जो भी देसता ब्यथा भी हलकी सी टीस होटा मे निक्कन पडती—

“बचारी मूक पशु की तरह दिन भर काम म लगी रहती है ।”

एक दो चार विमा के बाबू जी न पागिश की कि विमा को स्कूल भेजा जाय, शायद चिटठी पत्री लिखना सीख जाये, लडकी की जात है, कल को घानी ब्याह होगा समुराल जायेगी तो अपने सुख-दुख का समाचार तो दे सकेगी ।

वैसे इस बात को वे भी अच्छी तरह जानत है कि ऐसी लडकी से शादी कौन करेगा, और अगर करेगा तो वह कौन सी सुखी रह पायेगी । पर जब दो चार दिन स्कूल जाने के बाद मास्टर जी ने कह दिया कि—

‘पढित जी— इस लडकी का दिमाग बिलकुल शून्य है यह कुछ भी ग्रहण नहीं कर सकती ।’ यह सुनकर विमा के बाबू जी को काठ सा मार गया था ।

—समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करना उसका चक्र ता अनवरत गति से चलता ही रहता है । विमा के चेचक से लग से भरे चेटरे पत्र और सावली सी बाया पर भी यौवन के हरसिंगार फूलने लगे थे । वह बड़ी हो रही थी पर उसे अपन बड़े हाने का बोध भी नहीं था ।

यह कसी विडम्बना थी कि जिसके शरीर म बसत अपने सम्पूर्ण बभब को लेकर प्रवेश कर रहा ही, उसे ही उसके सौरभ का आभास न हो, पर विमा की वास्तव म यही स्थिति थी । अपने मे हा रहे शारीरिक परिवतन से माँ ही उसे अवगत कराती, और उसे उसे रहने का कहती वसे ही वह रहने लगती ।

बाबू जी की चिन्ता का बोझ बढता ही जा रहा था । वे जहा भी जाते उसी के रिश्ते की बात चलाते । लेकिन एक बात जरूर थी व जहा भी विमा के रिश्ते की बातें चलाते पहले से ही सारी स्थिति बता देते, विमा की मानसिक एव

शारीरिक कमजोरी की चर्चा करना भी नहीं मूलते, इसने पीछे वह एक ही दलील
दन ।

“मैं किसी के साथ धोखा नहीं करना चाहता, आज तो मैं बात छिपाकर
विमा को ब्याह दू बल को सारी जिन्दगी ये गुनना पड़ेगा कि उसके पिता ने
धोखे से उसको किसी के गने बांध दिया है, इन्ने जो भी स्वीकार करेगा उसे समझ
बुझ कर परिस्थितियों से— समझौता करके उसको स्वीकार करना पड़ेगा”

इधर बाबू जी विमा के ब्याह के लिये दौड़ भाग कर रहे थे, क्योंकि
विवाह कन्या की नियति है । नहीं करने पर क्या समाज वाले जीने देते हैं, रोज
इधर उधर से बातें सुनने को मिलती—

“जवान लडकी को बच तक घर में बँधायें रखेंगे, पण्डित जी, आखिर
को तो उसके हाथ पीने करने ही पड़ेंगे,

पर बाबू जी का मन हर समय आशकाओं के मबर जाल में डूबता
उतरता रहता—

—क्या विमा विवाह के द्वारा मुक्ती हो सकेगी, पता नहीं यह अबोध
लडकी किसके पल्ले पड़ेगी—

यह बात सत्य है कि मनुष्य कुछ सोचता है और विधाता कुछ और ही
स्परखा बनाता रहता है । एक रात पता नहीं क्या हुआ कि विमा रात भर
उल्टी करती रही उसे अस्पताल ले जाया गया, शरीर में पानी की कमी हो गई ।
डाक्टर इलाज में लग गये पर विमा बेहोश पड़ी रही । उसके शरीर पर वही
लाल काली घारी की साड़ी मौजूद थी जिसका आचल जल जाने के बाद मना
करने के बावजूद भी वह पहनती आ रही थी । जबकि आचल जली साड़ी का
पहनना अनिष्ट का सूचक होता है ।

वह जब भी जरा सा होश में आती अपने हाथों से चूड़िया उतार उतार
कर फेंकने लगती । अंत में उसकी आँखों से दो बूँद आसु डुलक पड़े और विमा
ने सबकी ओर से मुह फेर कर प्रतिम विदा ले ली थी । वह इस ससार की सारी
कथाओं व्यथाओं से बाधा बंधनों से मुक्त हो गई पर वह सारे परिवार को भी
चिन्ताओं से मुक्त कर गई थी ।

यह सही है कि सतान माता पिता की आत्मा का अंश होती है । इसलिए
उसकी मृत्यु पर दुःख होना और माँ बाप की छाती फटना सहज बात थी पर
यह भी गलत नहीं था कि विमा की असामयिक मौत ने उन्हें उसके विवाह की
चिन्ता से मुक्त कर दिया था । उसके कटका क्षीण जीवन की जिस आशका से
उनकी छाती काप उठती थी, वह मार अब सदा के लिये दूर हो गया था ।

दर्द के रिश्ते

—जब भी सामने वाली वाली मकान की ओर देग-नी हू मन एक अजीब खिन्नता और बड़वाहट से भर जाता है। दिन - रात यहा पर काम करते हुए उसमे हुये वाली वाली मुग पर अजीब सी उदासी निग हुप उग स्त्री की छवि को दिमाग से निशामने पर भी निवास नहीं पाती, जिमे अगर मही परिवेश मिलता, सद्भावना पूण हृदय रखने वाला साथी मिलता ता न जाने यह जीवन की किन ऊचाईयो पर पहुच जाती।

—दो प्यारी - प्यारी सटकियों और एक बेटे की मां बिनू बटे अनुशासित परिवार मे पैदा हुई थी। शिक्षा म भी कोई कोर बसर नहीं छाडी गई थी। पति का घर मिला तो वो भी आधुनिक मुग सुविधाया से युक्त बनाप - शनाप पसा, पति खुला खच करते। वैसे वे अक्सर दौरे पर ही रहा करते थे। घर-बाहर दोनों की जिम्मेदारी बिनू को ही समालनी पडती थी। उससे इतनी अपिय अपेक्षायें की जाती कि उसका सास लेना दूमर हो गया था, ऊपर मे पति का रत्ना व्यवहार जब भी घर खच के लिये रुपये मागती उतर मिलता —

—इतने रुपये तो घर म देता हू क्या हो जाते है रुपय।

—मैं कोई अपने ऊपर ता खच करती नहीं बच्चो की पढाई - लिखाई है। घर मे गाय, बकरी, कुत्ते पाल रखे हैं उनके भी तो खाने खिलाने मे खच होता है।”

—पति की नौकरी मले ही अच्छी थी पर बिनू का हाथ हमशा तग ही रहता, यहा तक की उधार तक लेने की नौबत आ जाया करती थी और पडोसियो ने भी अपने कल्पना जगत मे उसकी उलजलूल सी मूर्ति बना रखी थी।

आस पास ऐसा परिवेश नहीं था कि कोई उसकी अतव्यथा बाट सबता, सभी अभिजात्य बग के लाग थे, केवल रमिया नाम की नौकरानी ही उसकी व्यथा की सामोदार थी। दोनो के कुल के स्तर म गहरा जन्तर हान के बाद भी दाम्पत्य जीवन की रसमीनी फुहार से दोनो ही वचित थी।

बिनु सारा दिन घर म तीनों बच्चो को समालती वय सधि की चौखट

पर मझे उन बच्चा के सामन जय भी कोई समस्या आती वे कातर आखो से मां को ही निहारने लगते थे और जैसे जैसे बिनू को ही उनकी समस्या का समाधान करना पड़ता था ।

उधर रमिया तीनो बच्चा का साथ लिय लिये सारा दिन दूसरा के घरों म काम करती जो भी रूसी - सूखी मिलती बच्चा को खिला देती आप भूखी रहती । जब बिनू अपनी ब्यथा का प्याला उसके आगे उडेलती तो वह अपनी नगी पीठ दिसा कर कहती—

‘ देखा न धीमी जी कितना मारा है उस कमबख्त ने मेरे कू, सारी पीठ पर नील उपड गये हैं । क्या करू ऐसे भरद का, रोटी भरपेट खिला नहीं सकता फिर मारता काहे कू है । ’

—शायद रात का पति स मार खाना और दिन मे एक दूसरे के जरूमा को सहलाना ही उनकी नियति बन चुकी थी । मगर रमिया पति के द्वारा पीडित होने पर अपनी पीठ के घाव उघाड कर दिखा तो सकती थी चिल्ला चिल्लाकर गाली निवाल कर अपने ऊपर हुये अत्याचारा का डिंडोरा तो पीठ सकती थी, पर बिनू को अपनी उपेक्षा से लग आघाता की पीडा को अदर ही अदर पीना पड़ता था, क्योंकि वह उस दायरे के अदर थी जिसे सम्भ्रांत कुल कहा जाता है और जिसे लांघने से ऊँचे स्तर वाला की मर्यादा नष्ट हाती है ।

बिनू सोचती है वह बी ए पास है, पढ़ी लिखी है, कहीं नौकरी करती तो आत्मनिभर तो होती, पैसे मांगन पर पति का भुल्लाहट भरा स्तर तो सुनने का न मिलता पर फिर सोचती है,

क्या नौकरी करने पर स्थिति मे अन्तर आ जाता । रमिया भी तो दिन रात खटती है पर कौनसी आज्ञागी मिली है उसे । सच तो यह है कि नारी आर्थिक रूप से भले ही आत्मनिभर हा जाये पर पति उसे मानसिक गुलामी से मुक्त नहीं रखना चाहता । वह पत्नी के रूप मे ऐसी नारी चाहता है जो आखे रहते हुये भी उमकी आज्ञा का पालन आखो पर पट्टी बाधकर करे, कान सुनने के अन्वस्त तो हा पर हाठ केवल जी और हा जी का ही उच्चारण कर सके, इससे अधिक कुछ नहीं ।

पर बिनू सदा से ही विद्राही रही है उसने मूक होकर अत्याचारो को सहा जरूर है पर अपने स्वाभिमान को चुकाया नहीं है । कुछ मामलो पर तो वह भी अड ही जाती है, खासकर बच्चो के भविष्य का प्रश्न सामने आने पर वह

कभी चुप नहीं रहती । पत्नी के गौरव मय पद की गरिमा उसे सच्चे अर्थों में भले ही प्राप्त न हो पर मातृत्व का गौरव पूण पद वह खोना नहीं चाहती ।

आज रमिया भी अपने परिवार के साथ बहुत दूर चली गई है आर बिनू भी यह मकान छोड़कर अ-यत्र चली गई है, पर दानो के व्यक्तित्व का साम जस्य सब तरफ बिखरा पडा है, ऐसी कितनी ही व्यथापूरित अश्रूपूण आखें होंगी, जो धत्र तत्र सबत्र अश्रु वर्षा करती होंगी पर उनके आसु पाछने वाला इस घरती पर कोई न होगा ।



जीवन का सच

बाढ़ का पानी सीढियों तक आ चुका है। कल शाम तक ता गंगा का पानी कितनी दूर चमक रहा था। एक रात में इतना पानी बढ़ गया। पानी में खेलने और तैरने की इच्छा ने मन में उत्साह भर दिया है। स्कूल जाकर क्या करना है। अब तो सारे दिन पानी में डुबकी लगाना और बहते हुये आम, अमरुदों को पानी से निवालना है और बाट-बाट कर खाना है, ओ हो कितना मजा आयेगा पर तभी अम्मा जोर से पुकार उठती है”

“बिट्टी जल्दी तैयार हो जा, स्कूल बस आती होगी, राज-राज स्कूल बस छाड़ देती है तो रिक्शे के पैसे आर लग जात ह।”

जल्दी जल्दी बस्ता तैयार करने लगती हू, मां की उस भयंकर मार का अभी तक भूल नहीं पाई हूँ, जब स्कूल न जान की जिद पर और पैसे मागन पर मा ने सवा सेर का पीतल का लोटा सिर पर दे मारा था और खून की धार बहत दलकर स्वयं रो पड़ी थी।

स्कूल में कक्षा में बैठी रहती हू पर मन भटकता रहता है, घर के आस पास पता नहीं गंगाजी कहां तक आ गयी होगी। अयमनस्क सी बैठी रहती हू कि टीचर कह ही देती है—

“आज क्या बात है पढाइ में मन नहीं लग रहा है। गुमसुम सी बैठी है, राज तो उचक-उचक कर हाथ खड़ा कर प्रश्नों के उत्तर देने को तैयार रहती है।”

क्या कहू टीचर से, क्या यह कहू कि आज मेरा मन गंगा की लहरों में भटक रहा है, मेरा घर आज टापू बना हुआ है, जिसमें खेलने के लिये मेरे मन प्राण बचने है। छुट्टी होने पर स्कूल बस से लौटती हू तो बस घर तक नहीं आ पाती, चौमुहानी पर ही छोड़ देती हूँ क्योंकि घर चारों तरफ से बाढ़ से घिर गया है।

छप छप छपाक लोग नावों से आ जा रहे हू, मैं भी नाव में बैठकर घर पहुँचती हू, गाँव के अन्दर तक पानी भर गया है। पेडा पर साप लटक रहे है।

एक सफ़दर रंग का पिल्ला पानी में उड़ता आ रहा है उसे हमन बचा लिया है। सब भाई बहन उसकी तीमारदारी में लग गये हैं कोई उस सातुन से नहला रहा है, काइ बर्तन में दूध और डबल रोटी लेकर चला आ रहा है बड़े भया बह रहे हैं—

‘मा जल्दी से सामान बांध ला, नीचे की मजिल का सारा सामान ऊपर ल जाना चाहिये, पानी के बहाव को देखकर लगता है कि आज रात नीच की मजिल में पानी भर जायगा।’

मुझे ऊपर से नीच आने का मना कर दिया गया है। शैतान जो ठहरी, अम्मा जल्दी जल्दी नीचे का सामान ऊपर करती है, पर मुझे अपनी किताब और कापियो की चिंता है, वही पानी में बह गई तो क्या होगा, अम्मा ता वह देनी पढाई से जी चुरान के लिये जान बूझकर गिरा दी होगी।

सास का अधिकार पूरा स्वर गूज उठता है—

‘बहु अमी तक राटिया नहीं बनी क्या ऐसी गुमसुम में सी क्या बठी है’ स्मृतियों की चादर से उबरकर बाहर आती हूँ, पर क्या कह इस मन को जा भूलना चाह कर भी कुछ नहीं भूल पाता। मइया का हसता चेहरा सामने आता है—

मुझी तो कभी उदास नहीं होती हर समय हसती ही रहती है।’

ओह फिर वही बाढ़ और चारों तरफ पानी ही पानी। नीचे की मजिल में पानी भर गया है, घर छोड़ना पड़ेगा खतरा है, पुराना घर है कहीं बठ न जाये। नाव में घर का सारा सामान रख दिया गया है। नाव धीरे-धीरे सुरक्षित स्थान की ओर बढ़ती जा रही है। पानी से खेलने का सारा मजा किरकिरा हो हो गया है, घर पर रहते ता छत से पानी में बूदते, वागज की ढेर सारी नावें बनाते उड़ तराकर हाड लगाते, छोटे - छोटे कपडों को धोते नाव वालों का हाथ हिला हिलाकर बुलात पर अब क्या। मा ता आकर नयी जगह व्यवस्था करत में लग गई है। मा से कहते हैं—

माँ घर वापस कब चलेंगे”

मा कहती है—

जब बाढ़ का पानी उतर जायगा तब।”

तब जाकर क्या करेंगे अभी तो आहा ! कितना मजा आना ।

उस समय कौन जानता था कि इन बातों को कि वाढ आनन्द का सदेश नहीं तबाही का सदेश लेकर आती है । लोगो के घर बार डूब जाते हैं, लोग बेघर बार के हा जाते हैं । आज जीवन का सच समझ पाई हूँ, पर बहुत देर हा चुकी है ।



चुनौती

बार बार निशा का हृदय भर आता है, आखों के सामने अपनी लाडली बटी बिनु का चेहरा नाचने लगता है, छाती में हक सी उठने लगती है।

उसकी एक मात्र लाडली बिनु का उससे दूर कर दिया गया है। छीन वाला और कोई नहीं, स्वयं उसका पति वरुण है, जिसे वह शादी के आठ वर्ष बीतने के बाद भी समझ नहीं पाई है कि वह क्या चाहता है? कब उसका मूड ठीक रहता है, कब किस बात को पसंद करता है? जिस बात को एक समय पसंद करता है वही दूसरे समय नापसंदगी बन जाती है। बिनु को उसके हाथों से छीन कर ल जाना भी मात्र एक पड़यंत्र की रूपरेखा है कि न चाहते हुए भी निशा को उसके साथ जीवन भर रहने का समझौता करना पड़े।

मतान नारी का सहारा है तो ममता का दुबल पक्ष भी है, उसका ममता उसे एस कार्यों का करन पर विवश कर देती है जिसे उसका हृदय कभी स्वीकार नहीं करना चाहता।

शायद वरुण न भी यही साचा है कि बिनु की ममता निशा को उसके सामने घुटत टुकन को विवश कर देगी। वह उसकी सही गलत सारी हरकतों को नजर आंदाज कर उसके साथ रहने का तैयार हो जायेगी। बिनु के भविष्य का प्रश्न उसे समझौता करने पर बाध्य कर देगा।

पर निशा का सक्ल्प अटल है वह किसी भी कीमत पर समझौता नहीं करेगी। निशा के मन में विचारा की आधी सी चलने लगती है, क्या करेगी वह। दिग्भ्रमित भी हा उठी है वह।

मां बाप के लाड प्यार में पली चार भाइया की लाडली निशा जिसन कभी य जाना ही नहीं कि दु ख किस चिडिया का नाम है। स्कूल में पढ़ने वाली अल्हद लडकी जिसे गंभीरता छू भी नहीं गई थी। शैतानी करन के नये-नये तरीके इजाद करना उसकी दिनचर्या में शामिल था। ब्याह के समय कोई उम्र भी हा नहीं थी बचपना पार करके पंद्रहवें सालहवें वर्ष में ही उसने ब्रदम रक्खा था।

बाबा अक्सर बीमार रहा करत थे, उनकी लाडली पोती उनके सामने

ही अपने घर बार की हो जाये, इसी कारण जल्दी ही उसका ब्याह कर दिया गया था। शादी में मा बाप ने कुछ भी रसर न छोड़ी थी। दहेज से समधियाने वालों का घर भर गया था।

रूपवान तो वह थी ही, उसको बनाते समय विधाता ने कुछ भी कसर नहीं छोड़ी थी। गोरा रंग, लम्बी सुतवा नाक, बड़ी-बड़ी आंखें, साचे में ढली सम्पूर्ण देह्यष्टि और उसके ऊपर जब वह सुख लाल जोड़ा पहन कर समुराल के आगन में उतरी थी तो सारा घर और पड़ोस उसकी देखने के लिये उमड़ पड़ा था। मुह दिखाने के समय कितने स्वर उसके कानों में पड़े थे—

—बड़ी सुन्दर बहू है।

—बिलकुल चांद का टुकड़ा है।

—घर में आते ही उजाला हो गया।

सबने उसके सास समुर को बधाई देते हुये उनके भाग्य की सराहा था। स्वयं निशा भी तो अपने भाग्य पर फूली नहीं समा रही थी। ऐसे ही मुन्दर, मुशील, रूपवान पति की कल्पना का चित्र उसने अपने मन में सजोये रक्खा था जो उसे बरुण जैसे पति के रूप में मिला था।

विवाह के कुछ दिन तो रिश्तेदारों की भीड़ में पख लगाकर उड़ गये थे। नई नवेली होने का चाव, सास समुर की स्नेह पगी आवाजें, ननदों का हास परिहास, पति का मान मनुहार उसके जीवन को नित नये रंग देता रहा।

पर आग लगे उस मनहूस शाम को, जब उसके पति एक अति आधुनिक युवती को पहली बार अपन साथ घर पर लाये थे और बड़ी आत्मीयता से उसका परिचय ये कह कर कराया था—

‘मेरे दफ्तर में मेरे साथ ही काम करती है।

—बड़ी कमठ महिला है।

—बेचारी ससुर में बिलकुल अकेली है।

बड़ी सहामुभूति सी भनकी थी उसके स्वर में। और उसके बाद हर रोज नई नई स्त्रियां उनके साथ घर आने लगीं। कमी माया, कमी छाया, कमी विमला, कमी कमला बगरह बगरह।

चुनौती]

वह कुशल गृहिणी की तरह उनका स्वागत करती। अगर स्वागत मजरा भी कमी रह जाती है पति देव का काप भाजन उसे ही बनना पड़ता। 'मे मूल बौद्ध, बेचकूफ आदि को साा दी जाती।

पर ये कमी सोचा भी न था कि पानी इस तरह सिर के ऊपर स निकल जायेगा। निशा के पति और उनके बीच सम्बन्ध का दायारा बढता ही गया। यहा तक कि वे एक दूसरे के अतरंग सम्बन्धो मे भी दखलानाजी करने लगी। कई - कई दिन तक वे एक दूसरे से अनबोले ही रहते। उसके स्वास्थ्य पर भी इसका प्रभाव पड़े बिना न रहा। जो उसका केवल उसका था, उस पर अय किसी का अधिकार वो कसे स्वीकार कर सकती थी? उसके एकाधिकार को चुनौती दी जा रही थी, जब वह अपने पति की चर्चा अपने सास ससुर से करती तो वह बड़ी लापरवाही से सिर को भटका देकर मुह बनाकर कहते—

—तू क्या चाहती है कि वह हर समय तेरे ही खूटे से बधा रहे, आखिर आदमी है, दस जगह दूसरे काम भी है। तेरे को क्या कमी है, गहनों और कपडो से तेरी आलमारी भरी है उह पहन और अपन शौक पूरे कर'

शायद उनके लिये दाम्पत्य का पवित्र अथ केवल गहने कपडो म ही सिमट कर रह गया था, पर निशा का मन इन सबमे नही रमता वह पति का सम्पूर्ण ध्यान पाना चाहती है जो उसके जीवन का उपवन के समान महका दे। पर इसके बदले उसे मिल रही थी उपेक्षा और इस तरह उनके बीच दूरिया बढती गई। निशा ने कितनी बार प्रयत्न किया कि वह पूछे कि

—आखिर उसकी क्या गलती है ?

—उसमे क्या कमी है ?

—क्या उसके आवरण मे कोई कमी है, जो वह उसे बाध नही पाती ?

- एक बार केवल एक बार वो उसकी गलतिया गिना दे वह अपने म सुधार कर लेगी।

पर बहण अबोल ही रहते। उनके बीच के रिश्ते अर्थहीन और बदरग होते गये। उसने उन्हें समझाने का प्रयास किया था, उनके जीवन को सवारने का कितनी बार प्रयत्न किया था पर व मारपीट, गाली गलौच पर उतर आय थ और बिबश होकर उसे वह घर छोडना पडा था।

जिस समय वह मा के घर पहुंची तो सारा घर उसे देख अवाक रह

गया था मली साडो, जगह-जगह गाला पर आसुओ के बहते निशान, बिना कुछ बहे ही व सब कुछ समझ गये थे और मा के कंधे से लगाकर निशा बुरी तरह सिसक उठी थी ।

मा के घर निशा हर समय उखड़ी-उखड़ी सी रहती । उस समय उसके मुख दुख का सहारा विनू ही थी । जिसकी भोली मुस्कान और तुतला तुतला कर मा - मा की रट लगाना सावन की रिमझिम फुहार के समान उसके धावो पर मरहम वा लेप किया करती थी ।

पर आज एक वर्ष हो गया है उसी विनू की तोतली बातें सुनने के लिये उसके कान तरस गये हैं और यह खबर उड़ती - उड़ती मिल रही है कि—

—घेटी चाहिये तो आत्म सम्मान के मोह को त्याग कर यहा आकर रहे”

शायद ऐसा करके उसके पति उसकी ममता का सौदा करना चाहते हैं ।

वह विनू को तो कोट से लडकर ले लेगी पर उनकी सही गलत हरकतो से समझौता कभी नहीं करेगी ।

वह अपना रास्ता स्वय बनायेगी । दूसरो के साथ गलत रास्ते पर चलना उसे स्वीकार नहीं ।

वह अपने मा बाप पर भी आश्रित नहीं रहेगी । वह अपने परो पर खडी हागी, आखिर वह पढी लिखी है, जीवन म आन वाली चुनौतियो का मुकाबला कर सकती है ।

जब उसके पति को उसकी आवश्यकता ही नहीं है, उनके लिये रिश्ते की पवित्रता कोई महत्न नहीं रखती तो वह उनके ऊपर बोझ क्यों बने ? वह ऐसा समझौता कदापि नहीं करेगी ।

अपनी मजिल की तलाश वह स्वय करेगी । नारकीय जीवन जीना, घुटन टेकना उसे मजूर नहीं है वह अपनी अलग से पहचान बनायेगी । अपने आप को स्वावलम्बी बनाकर नारी जाति पर होने वाले अत्याचारो और पुरुष को अमर्यादिक आचरण के विरोध म वह प्रलख जगायेगी ।



आखिरी निर्णय

—हट जाओ मेरे सामने से, निकल जाओ मेरे घर से, मुझे तुम्हारी सूरत जरा भी अच्छी नहीं लगती, हर समय चेहरे पर बारह बजे रहते हैं—

शलेश जार-जोर से बोल रहे थे और वह चुपचाप सड़ी सुन रही थी। केवल वही बयो, बड़े-बड़े बच्चे सुन रहे थे, दीवारा के भी कान होते हैं मो पड़ोसी भी सुन रहे थे।

ऐसे तो किसके घर में ये बहाना सुनी नहीं जाती, जहाँ दो चार बतान हात हैं, वहाँ तो टकराहट पदा ही जाती है, पर लोगो को दूसरो की टकराहट में कुछ ज्यादा ही आनन्द आता है।

बसे ऐसा भी नहीं कि उनमें ऐसा झगडा पहली बार हुआ हो, अकसर छोटी - छोटी बातों पर नोक - भोक चलती ही रहती है, कभी खर्चों का लेकर या बच्चों की पढाई को लेकर एक दूसरे पर आरोप लगाना उनकी दिनचर्या में शामिल हो चुका है।

—सारा दिन घूमते हो, पेट्रोल नहीं फूकता है क्या ?—

—तुम बसे साडी रहते हुये एक के बाद एक खरीदती जाती हो, मक-अप के सामान में बसे खर्च नहीं होते क्या ?

कभी बाजार से सब्जी लाने के बाद शलेश थला पटक कर कहत—

—केवल मैंने ही सब्जी लाने का, सामान लाने का ठेका ल रक्खा है, क्या ? तुम सारा दिन घर में क्या करती हो जरा बाजार से सब्जी खरीद कर नहीं ला सकती—

—क्यों ? मैं क्या घर में राटिया नहीं पकाती कपड नहीं धोती, सफाई नहीं करती, क्या तुमने मेरे लिये कोई नौकरानी रख छोडी है —

कभी बच्चों की पढाई को लेकर झगड बाजी हो जाती—

—सारा दिन बाहर घूमते हो, दा घडी बच्चो को लेकर ही पढाने बठ जाया करो—

—मैं क्या बिना काम के घूमता हूँ, तुम क्या करती हो, पढी लिखी हा, होम बक तो तुम करा ही सकती हा ।”

इस तरह राज ही किसी न किसी बात को लेकर दानो मे हल्का सा तनाव हो जाता फिर सब कुछ सामान्य हो जाता । जब भगडा बढ जाता तो शलेश चुपचाप स्मूटर उठाकर बाहर निकल जाते और घटो भटकते रहते वह घर के कामो मे व्यस्त होकर अपनी चिडचिडाहट और ग्रासुओ को भूल जाती, घर आने पर धाली मे खाना परास कर रख देती और व अनबोल ही खाकर हाथ धो लत ज्यादा जरूरी बात पर ही सवादो का सिलसिला चलता—

—मेरे पीछे कोई आया था—

—कोई नहीं —

— किसी का पत्र आया क्या—

—वह डाक लाकर चुपचाप सामने रख देती—

—बच्चे स्कूल गये—

—वह केवल सिर से ईशारा भर कर दती,—

कुछ दिन बाद थोडा सहज होने पर पूछ वठत—

—और तुम्हारे आफिस मे सब ठीक - ठाक है ।

—कोई नई बात तो नहीं हुई ?

—बच्चे होम बक ठीक कर रहे ह ?

वह भी नपे तुले शब्दो मे ही उत्तर देती । शायद घर का सारा उत्तर दायित्व वसुधा का ही था । पर उसने अब काम और अपने बीच तालमेल बैठा लिया था । दो तीन दिन तक कुछ असामान्य स्थिति होती फिर सहज हो जाता । दाना बच्चे भी इस घातावरण के अभ्यस्त हो चले थे । उहे मालुम था, भगडा होने पर दा दिन तक मम्मी पापा हमार मान्यम से बात करेंगे—

—गुडडु, मम्मी को बाल देना मैं दो घटे लेट आऊगा—

मम्मी ऑफिस जात समय पिंकी स कहगी—

—पापा स कह देना गैस वाल के यहा फोन कर द, गस खतम हा गई है ।

फिर सहज होन पर सवाद का आपसी सिलसिला उनम शुरू हा जायेगा, बच्चा की दिनचर्या एव उनके ब्रिया कलापो मे इससे काई अतर नही पडता था बयोकि उनका होमवक कराना टिफिन तैयार करना मम्मी के रोजमरा के कामों मे शामिल था । बस न आने पर स्कूल छोडना पापा का काम था और वे इसे बखुबी निभाते थे । इसके लिये किसी को भी कुछ कहन की आवश्यकता नही थी ।

और इस तरह बसुधा और शलश का छाटा सा परिवार सट्ट - माठ अनुभवो को लिये अपनी यात्रा तय कर रहा था और घटनाआ की यह भावति और पुनरावृति केवल उनके परिवार मे ही नही लगभग सभी परिवारा म दुहराई जाती है ।

पर वह बप बसुधा के जीवन म तूफान लकर आया, जब उसवे दूर क रिशत की ननद की लडकी स'ना उसके यहा बी ए की परीक्षा देने के लिय आई । कहने को तो वह उसकी लडकी क्षमा से जो कोई सोलह बप की थी, उससे दो बप ही बडी थी पर थी बडी चचल । हर समय हसी मजाक करना, नाचते गाते रहना, नयी - नयी पिबचरा की बातें करना उमकी आदत मे शामिल था । कहने को तो वह शलेश की बेटो के ही समान थी, पर पता नही उसकी यौवनमयी चचलता के किम छोर ने उसे अपनी ओर आकर्षित कर लिया, इमे बसुधा समझ न पाई ।

दपतर से सिर खपा कर लौटने के बाद जब स'नो हसती मुस्कराती उनके सामने आती और चचलता बश उनके हाथा को पकड लेती तो पता नही क्या उनका रोम - रोम मंत्रमुग्ध सा हो जाता । बसुधा आफिस मे और घर के कामो मे व्यस्त रहती । उसे इनना समय कहा था कि वह पति के घर वापस लौटने पर मोहिनी मुस्कान से उनका स्वागत करे या देर होने पर पति स पूछे कि—

“आज दपतर म देर क्यों हो गई ? काई विशेष काम आ गया था क्या ?

और अगर शैलेश घर आकर हाथो से सिर पकड कर बठ जाये तो केवल इतना भर कह देना ही पर्याप्त था— आलमारी म बाम रक्खा है लगा लो, सिर दद ठीक हो जायेगा ।”

इनना वह कर वसुधा अपने कामा में लग जाती। वह इस बात की भूल बठी थी कि पुष्प चाहे कितना ही प्रीठ क्यों न हो जाये पर उसका मन इस बात की अपेक्षा करता है कि कोई उसकी प्रतीक्षा करे। सिर में दद होने पर अपनी कोमल उगलिया उसके बालों में फिराये पर जिम्मेदारियों के भवर जाल में उलभी वसुधा के लिये इन अपेक्षाओं को पूरा करना मुश्किल था। वैसे भी नये नये दाम्पत्य जीवन में तो इन अपेक्षाओं का पूरा किया जाता है पर बाद में ये सब बातें नये उत्तरदायित्व के साथ गौण हो जाती हैं।

लेकिन इन सब अपेक्षाओं को अब सानो पूरा करने लगी थी शलेश को जरा सी भी बाहर से आने में देर हो जाती वह आते ही गले में बाहें डालकर भूल जाती—

—आज आपने घर आने में इतनी देर क्या कर दी, मैं तो कब से आपका इन्तजार कर रही थी, देखिये न मैं आपके कारण अब तक भूखी बैठी रही—

फिर वह गमा गम परोठे मेक कर लाती और वे दोनों डाइनिंग टेबल पर कहुकहे और शोर शराबे के बीच एक दूसरे को आग्रह से खिलते रहते।

अगर शलेश घर आत ही सिर घाम कर बैठ जात तो वह उनके पास आकर नम-नम उगलिया उनके बालों में फिराने लगती सिर दबाने लगती, और गम-गम लींग, इलायची की चाय बनाकर लाती। उस समय उन्हें ऐसा लगता जैसे वा तपते मरुस्थल में यात्रा करते-करते किसी शांत मुसद वृक्ष की घनी छाया तले बैठ कर विश्राम कर रहे हों।

जो शलेश हमेशा घर के बाहर रहते वे अब अधिकांश समय घर में ही बिताने लगे थे, कभी बिडीयो बलब से नई नई पिक्चरें लाते, कभी सानो को साथ ले जाकर शो रूम से नये फैशन का सलवार कुता दिलवा कर लाते और परीक्षा शुरू होने पर दो-दो घंटा उसी को पढाते रहते। परीक्षा भवन तक दो बार उसे छोड़ने जाते और दो बार लेने जाते। अब यदि वसुधा कभी देर होने पर उनके ऑफिस छोड़ने का आग्रह करती तो सपाट सा उत्तर मिलता—

—मुझे सानो का पहचाना है, देर हो जायेगी तो उसका पेपर लूट जायेगा—

जब अक्सर आफिस जाने में देर हान लगी तो पकीहारी वसुधा को नई लूना खरीदनी पडी, हालांकि उसका हाथ इन दिनों लग था। रोज नये नये खच

सामने आते थे परिवार के बीच रहत हुए एक दम त सात हजार रुपये निदानना बहुत मुश्किल था पर बसुधा ने सूना ता जुगाड मिरना म मिठाया था और यह सोचकर निश्चितता की सांस ली थी कि हर महीन तनखाह मिलन पर किराया का मुगतान कर देगी वैसे भी तो देर हान पर राज बास मे किचकिच हानी है, जिससे मन और अशांत हो जाना है । वाम अक्सर बहते—

—“क्या बात है मिसेज अराहा, आज बल आप अक्सर लट आती है, कभी - कभी सी दिखती है, पहन जैसी मुशलता स काय भी नहीं बरती, बोमार है क्या ?—

सहकर्मी भी उसे टान कर बहत—

—‘क्या आजकल आपका चेहरा उनरा हुआ क्या रहना है ? बसुधा पहले जैसी चुस्ती फुर्ती कहा चली गई’ ?

कैसे कहती वह, क्या कहनी कि आजकल उसकी सुख भरी गहस्पी को ग्रहण लग गया है आर फिर सब बातें ता सबसे कहने की नहीं होनी ।

फिर वह इस बात को भी अच्छी तरह जानती है, शलश का सानो के प्रति आक्षेपण वासना जनित नहीं है वह ता कुछ समय के लिय सुख की स्वप्निल छाया में अपने को खो देना चाहत हैं, जब साना वापस लौट जायेगी तो सब कुछ पहले की भांति सामान्य हो जायगा ।

पर ता भी बसुधा का मन तनाव प्रस्त रहता है । आजकल शलेश उसमे पहले की तरह नोक भोक भी तो नहीं करते । और उस समय तो उसके दिमाग की नशों चिटकन सी लगती है, जब सानो के सामने पडते ही शलश उसकी तारीफो के पुल बाध देत—

—‘आज तो पीले रंग के सलवार कुर्ते में बडी जव रही हो सन्ना,’
‘ऐसा लगता है जैसे सरसा के खेत में कोई नायिका किसी की प्रतीक्षा कर रही हो । और सानो किलकिला कर हस पडती, उसकी हसी ऐसी निष्पाद हसी लगती, जैसे दूर कहीं मंदिर में घटिया बज रही हो ।

जब बसुधा राटिया बनाकर लाती तो शलेश कहते—

—‘तुम जरा भी अच्छी राटी नहीं बनाती ।’

‘जा रे, साना जाकर बडिया गरम गरम घपाती बनाकर ला’

तब जैसे वसुधा का सवाग अवहलना स भग्नीभूत हा उठता । वह घर गृहस्थी के लिय इतनी मरती खपती है, उसकी काइ तारीफ नही और यहा साना की तारीफ के पुल पर पुल बाध जा रह हैं ।

जब सानो के पपर खतम हो गये ता उन दानो का राज नई - नई जगह घूमन का प्राप्राम बनता, नई डिशे बनान का प्रस्ताव रखला जाता, वे बाहर जात ता साथ साथ । घर मे रहत ता दाना पास पास बठे रहत, हँसी बहकहा बातो का दौर चलता रहता ।

व दोना जस एक स्वप्नमय समार म विचरण कर रह थ । वसुधा का इन सबसे कही कोई स्थान न था, उसका अस्तित्व केवल इतना सा था कि वह घर की व्यवस्था को ठीक ठाक रखे ।

बच्चे भी इम बदलत परिवेश स अनभिज्ञ हो, एसी बात नही, आखिर व भी तो यौवन और कौशेय के सगम स्थल पर खडे हुये थे, वे भी इस बात का महसूस कर रह कि साना आटी पापा को कुछ जमादा ही अच्छी लगती है ।

लकिन मम्माहन की यह अवस्था कय तक चलती । एक दिन ता साना को अपनी मा के घर जाना ही था । वसुधा के प्रस्ताव रखने पर—

“अव ता सानो की परीक्षा खतम हा गई, घूमना फिरना भी बहुत हा लिया, अब इमे वापस बीजी के यहा छाड आवो ।”

तो दोना ही जैसे सान से रह गये थ, उह ऐसा लगा था जस किसी ने उहें गहरी नीद मे सोत से जगा दिया हो । अनमन स बोल थ शैलेश ।

“अभी जल्दी क्या है, कुछ दिन और रहन दो, मेरी गर्मी को छुट्टिया होगी तब जाकर छोड आऊंगा । सानो भी बोली थी—

“क्या जीजी मैं आपका बोझ लगती हूँ क्या, जो मुझे इतनी जल्दी भेजना चाहती हैं ।”

वसुधा ने अनमनस्क सी होकर कहा था—

“नहीं ऐसी तो कोई बात नही पर तेरे बिना वहा बीजी का तकलीफ भी तो हाती हागी, वह बीमार जो ठहरी ।”

वसुधा इस बात को समझ गई थी कि न शलेश सानो को भेजना चाहत

है और न वह जाना चाहती है । इसलिये विवश हाकर उस बिना शलश को बताये एक निणय लेना पडा । उसने बीजी को चुपचाप एक पत्र लिख दिया-

सन्ना की परीक्षा खतम हा गई है, इसलिये वह राहुल भेजकर उसे जल्दी स जल्दी बुला ल और कोई अच्छा सा लडका देखकर उसके हाथ पीने कर दे, क्याकि सन्तो अब बच्ची नही रही है । बहुत बडी हो गई है ।”



विडम्बना

एक मा के पट से जमी, एक ही घर में पत्नी, पिता की स्नेह छाया में बड़ी हुई उन दो सुकुमार बहिनो की पैदाईश में कुछ वर्षों का अन्तराल ही तो था। पर उम्र में छोटी प्रमा तो शायद पैदा ही हुई थी, अपनी विकलांगता का अभिशाप लेकर। उसके दानो पर बमजोर एव निर्जीव से थे।

कुछ दिनों ता मा का ध्यान इस आर नहीं गया, बल्कि जिस उम्र में छोटे छोटे बच्चे खड़े होने का प्रयास करते हैं खटिया पकड़ कर चलने लगते हैं उम्र उम्र में भी प्रमा का न चल पाना मा को कहीं अन्दर तक भकभार गया था। मन में प्रश्न की आँधी सी चलने लगी थी—

“क्या यह लड़की कभी नहीं चल पाएगी ?”

अभी तो छाटी है। बड़ी होगी ता कैसे सह पाएगी वह अपनी बढ़ती उपक्षा को।”

जैसे जैसे प्रमा बड़ी होती गई और वह चलने का उपक्रम करने पर भी नहीं चल पाती थी, तथा लड़खड़ाकर गिर पड़ती थी वैसे- वैसे मा की आखा में और अधिक सूनापन घिरता जाता था। पहले-पहल तो मा ने इसे सहज रूप में लिया और सोचा कि सभी बच्चे शुरू-शुरू में ऐसे लड़खड़ाकर चलना सीखते हैं। लेकिन जब रोज-रोज इसी तरह गिरने-पड़ने की पुनरावृत्ति होने लगी तो मा की आशका दृढ़ होती गई।

और एक दिन, जब मा आगन में बँठी बँठी गेहूँ साफ कर रही थी— बाहर बहुत सारी मुहल्ले की बच्चियाँ खेल-खेल रही थीं बड़े ही अच्छे बोल थे उस खेल के—

फूलों से हम आते हैं।

किसको लेने आती हो ?

किसको लेने भेजोगी ?

किसकी शादी ?

जीर यही बोल बालत हुए एक पाल की लडकिया दूसरे पात्र की लडकिया के बीच म ऊपर हाथ करके नीचे से निकल जाया करती थी । एकाएक मा का ध्यान गया—

प्रभा अपने परा का बार - बार उठाती, घसीटन का प्रयास करती, मेल की यही पकितया दुहरा रही थी—

फूला स हम आत ह, किसका लने भेजागी ?

किंतु जब बार - बार काशिश करन के बाद भी वह चल नहीं पायी थी तो हार कर वही गिर पडी थी और फूट फूट कर राने लगी थी, वह सुबकनी जा रही थी आर कहती जा रही थी ।

मा । क्या मैं कभी फूलो वाला खेल नहीं खेल सकूगी ?”

और उसकी पीठ थपथपात, कप से बिपकाते मा भी रो पडी थी, आखिर वह करतो भी क्या ?

जबस मा का यह आभास हुआ था कि प्रभा कभी नहीं चल पाएगी वह एक से एक अच्छे डाक्टरा के पास दौडती रही, देशी विदेशी सारे ईलाज करवाती रही । प्रभा को काडलिवर आयल की मालिश करने की सलाह दी गई थी । मा सवेरे शाम नियम से दो बार उसकी मालिश करती, शायद प्रभा के पर काम देने लगे ।

मा दिन भर घर के कामा म जुटी रहती, प्रभा बिस्तर पर लेटे लटे, टुकर टुकर भा की कमरे और आगन मे काम करते निहारा करती । अक्सर मा का घर से बाहर का काम भी देखना पडता, क्योंकि दाबूजी आये दिन सरकारी दौरे पर रहा करते थे । ऐसे समय प्रभा का सबसे बडा सहारा किरण ही तो थी जा उसे अपने ऊपर लादकर कभी फला के बगीचो की सर कराती, कभी चौमुहानी तक घुमा कर लाती । उसको लिये किरण की कमर भी दुबन लगती पर जब प्रभा की आखा मे वह चमक देखती, नई चीजा को देखकर उसको हसता देखती तो वह अपनी सारी थकान मूल जाती थी ।

किरण खुद इतनी होशियार तो न थी कि प्रभा को अच्छी तरह सजा सवार सब, पर उस गाद मे उठाकर घुमाघुमा कर उसकी उदासी तो दूर कर ही सकनी थी और यही वह करती थी । इसलिए मा प्रभा की ओर से कुछ निश्चित सो रहा करती थी । किरण ने मा की परेशानियो मे थोडा बहुत सामा तो कर ही लिया था ।

लेकिन एक दिन, !

उफ ! कितना भयावह दृश्य था वह, जब किरण को सातो प्रकार की माता निकल आई थी। उस समय मेडिकल में इसका कोई इलाज भी तो नहीं था, लोग इसे केवल देवी का क्रोध समझते थे। सारा घर में तलना, छाकना बंद हो गया था। सब लोग उबला खाना खाने लगे थे।

माता का प्रकोप इतना तेज था कि विस्तर भी किरण को काटे के समान तकलीफ देह लगना था, बड़े बड़े चकते से पूरे शरीर पर उभर गए थे। राख को ध्यान ध्यान कर उस पर उसे सुलाया जाता था वह बंहोश सी पड़ी रहती थी। घर के सारे बच्चों को उसके कमरे में जाने की मनाही कर दी गई थी, छूट का रोग जो ठहरा। घर में अगर एक बच्चे को माता निकलकी है तो मक्खों वगैरह वारी में निकल आती है। इसीलिए ऐसा जतन किया गया था।

पर सबसे अधिक रोना तो प्रभा को आ रहा था, जब से जीजी बीमार पड़ी है, उसे कोई भी गाद में नहीं उठाता, मा भी दिन भर जीजी के पास ही बठी रहती फूलों की सँवराने वाली चौमुहानी तक घुमा कर लाने वाली जीजी को वह देखने के लिये तरस गई थी।

वह दिन रात विस्तर पर पड़े पड़े सुबका करती और मा के सामने आत ही रूआमी आवाज में कहती—

—मा ! जीजी कब ठीक होगी ?

मा ! वह मुझे घुमाने कब ले जायेगी ?

मा भला क्या उत्तर देती—

वह तो आप परेशान थी। किरण की बीमारी न उनका दिन का चन और रातों की नींद हराम कर दी थी। प्रभा के बार बार एक ही प्रश्न पूछने पर यह निरुत्तर हो जाती और आचल में मुह छिपा कर फफक फफक कर रो पड़ती।

प्रभा दिन रात पड़े पड़े छत की कड़ियाँ की ओर ताका करती। कभी कभी वह रो-रो कर हलकान हो जाती पर उसकी आर किसी का ध्यान नहीं आता। किरण की बीमारी न सबके होश उड़ा दिये थे।

प्रभा का कोमल मन इन उपेक्षाओं को सहन न कर सका हालांकि ये उपेक्षाएँ नहीं थी, घर के लोगों को परेशानी थी, पर भला प्रभा का अबोध मन

इस बात का क्या मतभेद। जिस जीजी की गोठ में जाकर वह अपना को मूत बठनी थी। उसी का दम एक मास बीत चुका था।

ममय बीतन के साथ चक्क का प्रकाप कम होता गया और किरण ठीक हान लगी पर ठीक हाना भी कोई ठीक हाना था ?

यह राग उस न जान कितन अभिशापो से शापित कर गया था। उसे दगले ही डर लगता था, सिर के सारे बाल उठने के कारण वह रण्ड मुण्ड सी हा गई थी, जीभ में चक्क निकल आने के कारण वह हकला हकला कर बीसन लगी थी उसका दिमाग पर भी माता की गर्मी अपना असर छाड़ गई थी और कोई कुछ कहता वह उस मारन का दोस्ती। जिस प्रभा को वह दिन मर गोद में उठाय फिरा करनी थी, उमी को अब फूटी आत्मा से देखना सहन नहीं करती थी, उसे गोठ में उठाना पिलाना तो दूर की बात रही।

प्रभा का मन इन आघातों का सहन न कर सका, उसने किरण की बीमारी में कसी मुश्किल से एक एक दिन काटे थे कि

जीजी ठीक हो जाएगी तो वह पहन की तरफ उसे फूलों के बाग में घुमायेगी।

पर किरण का उसकी ओर तिलतुल ध्यान न देना उसे मानसिक और शारीरिक रूप से पीड़ित कर गया। प्रभा दिन पर दिन सूखती चली गई, उसकी काया बिस्तर से चिपकती चली गई।

डाक्टरों ने बताया कि प्रभा को सुख-ही रोग हो गया देवाओं के असर का भी प्रभा की दुबल काया नकारती गई थी।

और एक दिन अपनी सारी विवशनाओं व्यथाओं को मन में समेटे प्रभा न मा की गाद में हिचकी लेते हुए दम तोड़ लिया था। डाक्टरों के साथ प्रयत्न भी उस मामूम की जान न बचा सके थे।

उस विवश प्रभा को उसकी सखिया फूलों के बाग में तो नहीं ले जा सकी थी, पर यमराज उसे लेने अवश्य आ गये थे जिस खटिया पर प्रभा अपनी विवशता का भार लिये दिन रात पड़ी रहना करती थी वह जगह अब खाली हो गई थी, केवल उस सुनेपन में एक आवाज सी गूजनी है

— फूलों में हम आते हैं।

किसका लेने आती हो ?

किसको लेने भेजोगी ?

विवशता

घड़ी के अलाम में चार बजने की आवाज सुनकर एक भटके के साथ नींद खुल जाती है। सवेरा होते ही मशीनी जिन्दगी का क्रम शुरू हो जाता है, बस पकड़नी है, दूसरे गाव जाकर ड्यूटी पर पहुँचना है। घर में बस स्टण्ड तक तक जान के लिये भी कम से कम पन्द्रह बीस मिनट तो हाथ में रखन ही पड़ते हैं, पर इतनी हड़बड़ाहट के बावजूद भी बस सामने से धूल उड़ाली निकल जाती है, दूसरी बस के लिये प्रतीक्षा करते रहो, ड्यूटी पर पहुँचने में अलग देर हो जाती है, मन और मस्तिष्क में तनाव उत्पन्न हो जाता है कनपटियों की नसें चिटकने लगती हैं। स्कूल देर से पहुँचने पर प्रधान के द्वारा उनाहने और शिकायतें सुनने का मित्रेगी सी अलग। दीवाल घड़ी की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया जायेगा—

‘देखिये न घड़ी में कितन बज रहे हैं आप लाग स्कूल अत्र तशरीफ ला रही हैं’

अगर अपनी असमयता और विवशता की दलीलें दी जायेगी कि—

“हम तो सवेरे साढ़े पाच बजे से बस स्टण्ड पर खड़े हैं पर बस ही नहीं मिली तो हम क्या करें”

—इससे हमें क्या मतलब ? मले ही आप रात को ही बस स्टण्ड पर आकर बठ जायें पर यहा तो आप आठ बजे पहुँची है।

कभी कभी तो नीवत यहा तक आ जाती है कि हेडमिस्ट्रेस हाजिरी रजिस्टर पर भुकी रहती है और साइन करने से पहले ही वह उठती है

‘उस बहुत हा गया, यह रोज रोज की लेट नही चनेगी, छुट्टी दीजिये और घर बैठिय।’

उम समय मन मस्तिष्क इनना अवसादग्रस्त हा जाता है कि पूछिय मत।

सच तो यह है कि रोज-रोज अप डाउन करना भी जान की जल्लत है। ऐसा लगता है, जैसे घर न हुआ कोई धमशाखा हो गइ, जहा पर रात्रि के

कम घटे केवल विधाम करने के लिये आते हैं, फिर गन्धेरा हाते ही शुरू हो जाता है, भाग लौड का अतहीन सिलसिला ।

नौकरी एक करता है, नींद सधकी खराब हाती है, किसी का छोटा भाई वम स्टण्ड पर आयेँ मलते हुये पहचान के लिय आ रहा है, किसी के पति उठी सीधी शट पहनार पीरो म चप्पलें डालकर छाडने आते हैं, जो कुमारी है उनके वूटे वाप घूमन के बहाने से ही स्टण्ड पर चले आते हैं । इतनी हड़बडाहट म एक कप चाय भी नो चैन से बँठ कर गड़ी पी जा सक्ती, जल्नी जल्नी लच वाकस म दा पराटे टालकर बस स्टण्ड की ओर काम उठने लगत हैं ।

वचारी कमला भी इही मे एक है, जिसके दो महान के बच्चे को घर पर रखने के लिये नौकरानी भी नहीं मिलती है, गोद मे लिय लिये बस म सफर करती हुइ स्कूल जाती है साथ म धन म सारे ताम भाम बच्च के लिये सवरे सवरे तयार करत पडत है, दूध की बोनल, नेपकिन । एक जान हजार झकट ।

स्कूल म आन पर स्कूल क सामने रहने वाली वाइ का उसे समला देती है और छुट्टी हागे पर फिर गोद म उठाय घर वापिस आती है । सौटत समय लम्बे स्ट की बमें अक्सर मरी मिलती है, कभी बठने को जगह मिलती है, कभी नहीं, यात्रिया मे जगह क लिय चिगौरी करने पर उत्तर मिलता है—

'आप पडी हैं गोद मे बच्चा है तो हम क्या करें, हम भी तो इतनी दूर के सफर से बके हुये आ रहे हैं'

काइ दूसरा यात्री यहा तक कहने म भी नहीं चूकता—

'बहन जी आगम करना है तो घर बँठिये, यहा बस म घबके खाने क्या चली आती है'

सब कुछ सुनना पडता है, क्योंकि विवणता है ।

उ ही म से एक मधु भी है, जो दिन भर म्मासती रहती है, दम उठना रहता है कितने ही डॉक्टर आयुर्वेदिक और होमियोपथिक इलाज करवा लिये पर राग है कि ठीक होने का नाम ही नहीं लेता ठीक हो भी कसे डाक्टर पूरा जाराम करने की सलाह देते हैं पर अप-डाउन की इम अपरा तफरी मे दो भिन्नद विधाम भी कहा मिलता है ।

पर इन सब के बीच कुछ सुखद क्षणो का अहमास भी करना पडता है नहीं तो जिन्गी बाकिल न हा जाये । लेट हाने पर बास से अक्सर टच्चरबाजा

हो जाती है, पर सहकर्मी एक दूसरे की परिस्थितियों से अच्छी तरह परिचित है, तभी तो न रुकने वाले स्टाप पर भी बस रुकवा देते हैं दूर से आता हुआ देखकर जल्दी आने के लिये जोर जोर से हाथ हिलाते हैं, बच्चे को अपनी गोद में जगह दे देते हैं काइ एक दो तो है नहीं पूरे चालीस सहकर्मी है, जो एक दूसरे के सुख दुख के भागीदार है ।

वापस घर लौटने की जल्दी सबको रहती है पर तब भी कोई किसी को छोड़कर नहीं आता । यह जानते हुए भी कि कोई उनसे गिला शिकवा नहीं करेगा कि तुम उसे छोड़कर क्या चले गये और न उनको किसी के द्वारा पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देना होगा पर यह बात है, अपनी आत्मा की उस सवेदना की, जो इन बण्टो के बीच भी उन्हें एक दूसरे से बाधे हुये है । तभी तो बस न मिलने पर बकरी से भरी ट्रक में आना मजूर है कुछ दूर तक पैदल चलना भी स्वीकार्य है, पर साथियों का साथ छाड़ना मजूर नहीं है ।

इस क्रम में सुपमा उत्तरदायित्वपूर्ण भूमतामयी मा की भूमिका अदा करती आइ है

किसी को छोड़कर जाना नहीं है,

सबको एक साथ रहना है,

एक साथ वापस घर लौटना है”

उनका यह आपसी विश्वास ही उन्हें सघर्षों में जीने की प्रेरणा देता है । भौंड से खचाखच भरी बस उमस से भरा वातावरण उनके आपसी हास परिहास से सरस हो उठता है । रास्ता कितनी आसानी से कट जाता है, दूरी का आभास रच मात्र भी नहीं होता ।

लेकिन ड्यूटी पर पहुंचते ही खतरे की तलवार सिर पर लटकने लगती है । रोज रोज समय को लेकर तनाव बढ़ने लगता है, बस पर अपना बश नहीं है । इसलिये देर सवेर हो ही जाती है ।

घर से दूर रहकर दो चूल्हे करना कोई सरल काम है क्या ? पर बास की इन मजबूरियों से क्या लेना देना, उनका काम तो रोज खबरें लिख लिख कर हेड ऑफिस पहुंचाना है ।

अप डाउन करने वाली महिलायें चाहे कितना ही हाड बक क्यों न करें स्त्रुत की उन्नति के लिये चाहे दिन रात एक क्यों न कर दे, पर पाच

मिनट की देरी होने पर सब कुछ गुड़ गोबर हो जाता है, उनके द्वारा किय गये कार्यों का मूल्यांकन कोई नहीं करता केवल एक ही प्रश्नवाचक चिह्न सामने हैं—

“आप समय पर ड्यूटी पर क्यों नहीं पहुँचते हैं ?”

पहले ही बस में घबके खाने पढते हैं, कभी कभी दा दो घण्टे बस की प्रतीक्षा करने में बीत जाते हैं, बस आती है तो रुकती नहीं है, मुह चिढ़ाते हुए धूल उड़ाते दृष्ये निकल जाती है। उस समय कसी हालत होती है, इसे कोई मुक्तभोगी ही जान सकता है ?

जब किसी का ट्रासफर गाव से शहर हाता है तो सारे स्टाफ में खुशी की लहर दौड़ जाती है, सब एक स्वर से कहते हैं—

“अच्छा हुआ पीछा छूटा, इस रोज की चल चग से”

यह रोज की चिक्चिक तो उनके साथ लगी ही हुई है, अगर सविस करनी है तो यह परेशानी भोगनी ही होगी,

कितना दुख लगता है, उस समय जब हमेशा व्यग्य वाणी से उह बीघा जाता है—

—मन हर समय घर में पडा रहता है।

—घडी की सुईया गिनती रहती है,

छुट्टी होने पर कितनी जल्दी जल्दी कदम उठते हैं, बस स्टेण्ड पर पहुँचने के लिये,

पता नहीं ऐसा क्या सुख है घर में,

पढाने में इनका मन क्या खाक लगता होगा’

सब कुछ सुनना पडता है कलेजे पर पत्थर रखकर क्योंकि विवशता है।



आघात

एक पसवाडा बीत गया कालिंदी ने अन्न का परित्याग कर रक्सा है, मुह में रोटी का एक टुकड़ा भी उससे डाला नहीं जाता है सूख कर मुह पीसा पड़ गया है, आंखों के चारा ओर काले धब्बे से ढक गये हैं,

कितना सुन्दर लगता था कालिंदी का चेहरा, अ ग-अ ग से जैसे जीवन की आभा सी फूटी जान पड़ती थी। लेकिन इन दिनों वह सूख कर ऐसी हो गई है, जैसे किसी ने उसके बदन का सारा रस निचोड़ कर रख दिया हो,

हर समय हसने मुस्कराने वाली, अभिवादन के लिये उत्फुल मुखड़े से हाथ जोड़ती सबकी वेदना में सहभागिनी कालिंदी आज दुर्दैव की शिकार होकर देवी की प्रतिमा के आगे प्रायना रत है कि वह उसका "याव करे, या तो उस रमेश को सद्बुद्धि दे जो पिता के प्रति अपने कर्तव्य को तिसांजलि देकर उसका प्राण हरण करने में भी नहीं हिचकिचा रहा है और जिसके कारण कालिंदी और रावेश का जीवन एक जलती धूनी के समान हो गया है, या कालिंदी स्वयं उन सबसे इतनी दूर चली जाये कि उसकी छाया भी उस न छू सके

वैसे तो कालिंदी को यह आशका बहुत पहले से थी कि कुछ न कुछ अप्रत्याशित अवश्य घटकर रहेगा, इधर जब से रमेश को बीच बाजार में दुबान खुलवा दी गई थी तब से वह कुछ ज्यादा ही सिर चढ़ गया था, धरेलु वामबाज से उसे कोई सरोकार नहीं था, रावेश बीमार है, कालिंदी का हाथ जल गया है, उसके लिये दवा लानी है इन सबसे जैसे कोई मतलब ही न हो।

इधर लगभग बीस पच्चीस दिन हो गये उसने घर से रोटिया सानी भी छोड़ दी थी, पूछने पर अनमना उत्तर देता—

"दुकान में काम बहुत है, घर आन का समय ही नहीं मिलता, उधर बाजार में ही कुछ खा पीकर पेट भर लेता हूँ।"

दर रात गये जब वह दुकान से घर वापिस सोटता तो बाँ लिये धाली परोस कर कमरे में रख जाती पर सवेरे धाली जरा भी हई ही मिलती, ऐसा लगता जैसे रमेश ने धाली को हाथ ही न

में कोर जाने की बात तो दूर रही। राबेश भी इस बात पर बहुत दिना से गौर कर रहे थे।

घातेरस के दिन कार्लिदी ने पूजा आदि करके रच रच के ढेर सारे पकवात बनाय कि आज सब साथ मिल बैठकर खायेंगे, लेकिन जय रमेश घर आया तो उसके तैयार बंदले हुए थे, नशे के कारण उसके होश हवास गुम थे, पर डगमगा रहे थे। यह जय बिना किसी से कुछ बाले घाले धपन कमरे में जाने लगा तो कार्लिदी ने आग्रहपूर्वक उससे कहा—

‘बेटा आज घनतेरस का दिन है, थोड़ा सा तो मुह भूझा कर लो’

इस पर गरज कर रमेश बोला—

“मुझे नहीं खाना ऐसा खाना,

भाड में जाये तुम्हारे पक्वान

मुझे नींद आ रही है, कम से कम रात में चैन की नींद तो सोने दो’

कार्लिदी के ज्यादा आग्रह करने पर उसने उसे जोर का धक्का दिया, तब राकेश अपने आपको रोक न सके, उनके सप्रेम का बाध टूट गया रमेश स आवेश में आकर वे बोले—

एक तो तुम्हारे लक्षण वसे भी आजकल ठीक नहीं है, रोज देरी से घर आते हो, छ महीने दुकान खुलवाये हो गये, तुमने एक पैसा भी घर में नहीं दिया ऊपर से अन बर्बाद करते हो, मुफ्त की मिल रही है इसलिये क्या ?

यह सुनकर रमेश ऐसे उछल पड़ा, जैसे किसी ने जलती आग में धी डाल दिया हो, शोषावेश में आकर मरने मारने पर उतारू हो गया और जोर जोर से चिल्लाने लगा—

“साले बड़ा घमण्ड है अपने ऊपर हमें रोटिया खिलाते हैं सो भी मुफ्त की।

थू है ऐसी रोटियों पर आज तुम्हें ठिकाने लगा कर ही दम लूंगा, फिर बच्चू सारी भाषणवाजी भूल जायेंगे’

वह राकेश पर लगातार घप्पड मुक्कों की वर्षा कर रहा था कार्लिदी दोनों के बीच बचाव कर रही थी, पर रमेश के तबे हाथा और ऊबे कद के आगे

उसका कोई वश नहीं चल रहा था, हल्की सी सर्दी की सटक आन लगी थी, इसलिये आस पास की छत पर पड़ोसी भी कोई दिखाई नहीं दे रहे थे, जो थे व अपने कमरे में दुबके पड़े थे जिन एक दो लोगो ने इस घटना का देखा व भी यह सोच कर चुप रह कि—

अरे, य तो बाप बेटे का आपसी झगडा है । पराइ आग में रोटिया मँकन हम क्या जायँ, मान लो धीच बचाव करने भी गय और अगर ये मुनने का मिल गया—

“आप कौन हाते हैं, हमार ध्यक्तिगत जीवन में टाग अडाने वाले ?

अरे साहब, ये हमारा आपसी मामला है, हम खुद सलत लेंगे,

जाइये और अपना घर समालिये,

घर में तो दीया जलता नहीं पर मस्जिद में दिया जफ़र जलायेंगे

तब तो सारा पानी ही उतर जायगा ।

इधर जब रमेश हाथो की मार से कार्लिदी राकेश का छुडा न सकी तो उसन थकहार कर राकेश की कमरे में डालकर ताला बाहर से बंद कर दिया, लेकिन उसे क्या पता कि जिसे वह सुरक्षित समझ कर निश्चित हो गई थी वह अभी भी सुरक्षित नहीं था, बाहर वालो से खतरा हो तो उससे निपटा भी जा सकता है, पर जब बाड ही खेत को खाने लगे, रक्षक ही भक्षक बन जाये, अपना पून ही दुश्मन हो जाये तो भला सुरक्षा की क्या राह रह जाती है । सुरक्षा के लिये ही तो आदमी घर बनाता है, लेकिन जब घर की दीवारें ही घर को खाने लग तो भला किसका वश चलता है ।

इधर रमेश अपने कमरे में चला तो गया लेकिन उसके मन में एक नयकर ज्वालामुखी फट चुका था, जिसके गर्मागम लावे से उसका सम्पूर्ण शरीर दग्ध हो रहा था ।

उस पर यह जुनून सवार था कि आज वह इस अध्याय का हमेशा के लिये समाप्त कर देगा और वह बड़ी धैर्य से अपने कमरे में हथियार खोज रहा था, अचानक उसकी नजर अपनी फोटो के पीछे पड़ी और उसने पिस्तौल निकाल कर हाथ में ले ली । उसने बाहर आकर खिडकी से कमरे के आंदर बडे राकेश पर निशाना साधा और पिस्तौल से गोली चला दी ।

उस दिन राकेश बाल बाल बच गया था, गाली तस्वीरा के शीशों को चूर चूर करती, दीवारों में छेद करती बाहर निकल गई थी अगर निशाना सही लग जाता तो राकेश की जीवन लीला समाप्त हो सकती थी और उस पर म कालिंदी के सौभाग्य का दीपक हमेशा के लिये बुझ सकता था ।

रमेश के सिर पर जैसे तून सधार हा गया था वह छत्र पर चढ़ गया धीरे धीरे से चिल्लान लगा—

“खबरदार ! गोली की आवाज सुनकर भाई बाहर भागा तो एक एक को मुनकर रत दूंगा”

राकेश और कालिंदी दोनों इस घटना से हतप्रभ से रह गये थे रमेश की संगत खराब है य तो वे जानते थे, लेकिन उसकी परिणति इतनी भयकर होगी वे यह कहां जानत थे । कभी सोचते “पुलिस में रिपोर्ट करा दें” पर यह सोच कर चुप रह जाते—

लोग क्या कहेंगे

बाप न बटे के हाथों में हथकड़ी लगवा दो,

अगर जेल हो गई तो सजायापना समझ कर इसे कौन अपनी सड़की देगा ।

व दाना दिन भर घर की दीवारों में घिर दुखा के सागर में डूबत उतरते व्यथा का कोई अन्त नहीं । काम पर जान की इच्छा भी नहीं करती, बाहर निकलने पर लोग दस तरह के प्रश्न पूछेंगे किस किसको उत्तर देंगे और किस किसका मुंह बंद करेंगे, क्या लोग से ये कहेंगे कि—

जिन हाथों से बट को पाला पासा है, आज वह बेटा उन्हीं हाथों को काटने पर उतारू है ।

पति के दुख से दुखी कालिंदी भी क्या सोचे और क्या करे मन में जब भावनाओं का ज्वार आता है तो साचती है—

अगर रमेश के स्थान पर उसकी कोल का जामा हाता था, उसके ऐसा करने पर वह थप्पड़ मार मार कर उसका मुंह लाल कर देती”

धर यह बात भी उतनी ही सच है कि कालिंदी ने रमेश को भले ही अपनी बाख से जन्म न दिया हो पर उसे अपने जाये बटे के समान ही पाला पोसा और बड़ा किया है ।

सब पूछा जाये तो माग्य ने सबसे बड़ा मजाक तो कार्लिदी के साथ ही किया है, एक वही तो है जो इस सम्पूर्ण घटना क्रम में ठगी गई है वही अपने मन के हाथों और कभी दूसरे के हाथों। वहाँ वह जयपुर के उच्चकुलीन परिवेश में पत्नी, मुख-सम्पन्नता से परिपूर्ण यौवन की रसमयी गगरी छलकाती, रूप, रस, गंध से परिपूर्ण एक खिलते हुये पुष्प के समान पल्लवित हा रही थी। डॉ. राकेश का उसके जीवन में आना एक नूतन था जो उसके मन के किनारों को झकझोर गया था। राकेश की विषम पारिवारिक परिस्थितियों से अवगत होने पर कार्लिदी उनका प्रति सहानुभूति से अदर तक द्रवित हो गई थी और इसी सहानुभूति ने उसके जीवन में प्रणय का बीजारोपण कर दिया।

प्रेम का आवग इतना तीव्र था कि वह अपनी जाति पाति वश मर्यादा, को मूलकर भविष्य के परिणामों से अनभिज्ञ राकेश के साथ अनजान डगर पर चल पड़ी, कितना समझाया था काल साहब ने—

“बेटी तुम जिस रास्ते पर चल रही हो वह रास्ता बाटा स भरा है, कहीं तुम्हारा यह कदम तुम्हारी मांग में सिद्धुर की जगह धगर न मर दे”

वह यह भी जानते थे कि राकेश का भरा पूरा परिवार है, उसकी पत्नी और दो बच्चे हैं, कार्लिदी का कदम उनके मुख मरे ससार में धाम लगा देगा और वहीं उनका अभिशाप उनकी बेटी को लग गया तो वह जीवन में सुख का एक क्षण प्राप्त करने के लिये तरसती रहेगी पर कार्लिदी राकेश के प्रेमपाश में इस प्रकार आवद्ध हो चुकी थी कि बाबूजी की सलाह उसे चुमती सी जान पड़ी थी, उसके विद्वक को जैसे पाला मार गया था, वह दिन रात इही सुख स्वपनों में सोई रहती—

“वह राकेश के साथ मुग्धमग ससार बसायेगी,

उसकी पत्नी को अपनी बड़ी धीदी तथा उसके बच्चों को राकेश की आत्मा का ध्रश समझ कर त्याग की जीवित मर्तिमान प्रतीक बन जायेगी,

अपने अहम का सुख वैभव को तृणवठ ठोकर मार देगी केवल इसलिये कि राकेश सुखी रहे।’

कार्लिदी के अतमन से वह दृश्य अभी भी विस्मृत नहीं हुआ है जब उसने कार से उतर कर डॉ. राकेश के घर में पहली बार प्रवेश किया था न कोई परम्परागत रस्म न कोई औपचारिकता का निर्वाह किया गया। उस समय

आखिरी निणय]

यही रमेश (राजू) केवल सवा साल का था ।

वह जानती थी कि यह मातृत्व गुण से जीवा मर वचित रहगी क्योंकि रमेश ने पहला ही यह स्पष्ट कर दिया था कि उन्होंने परिवार निषाजन के तहत आपरेशन करवा लिया है । इसलिय यह उसे मा दान का गौरव प्रदान नहा कर पायग ।

इस सत्य को धगीकार करते हुए कालिदी ने राजू का बमबर अपनी छाती न चिपरा लिया था और बड़ी दीदी के परो का अपन आचल से स्पश करती हुए कहा था—

‘ दीदी राजू आज से मरा है,

उसका सुप दुख, हसना-राना सब मेरा है । अब तुम इसकी चिता छोड दा ।

तुम वसे भी बीमार रहती हो, इसलिय राजू की जिम्मेवारी अब मेरी है ।”

यह सुनकर रमेश की पहली पत्नी ने एक गहरी श्वास ली थी, यह श्वास निश्चितता की थी या इस दु ख की कि उसका अधिकार छानने वाली दूसरी आर आ गई है, इस कालिदी भाप न सभी ।

लेकिन उस दिन से लेकर आज तक कालिदी ने कभी सात को सोत नहीं समझा, उसे बड़ी दीदी समझकर ही सम्मान दिया है । उसने अपनी पडाई मे काई यवधान नहीं उपस्थित होने दिया । परीभा देने जाती तो भी दीदी का पैर छूकर जाती वह उसे आशीवाद देती या थाप यह तो विघाता ही जाने ।

लगभग बीस वष होने को आय, राजू 21 बें वष म कदम रख चुका है, तब से आज तक कालिदी अपनी ममता का अक्षय कोष दोनो हाथो से उस परिवार के सदस्या पर लुटाती रही है । सविस करती जो भी बेतन आता, सब बच्चा पर परिवार पर खच कर देती । देवर के ब्याह म राकेश की बेटी के विवाह म उसन जो खालकर अपने अरमान इस तरह पूरे किये थे कि लागा ने यहा तक कह लिया था —

“पराये जाया क लिय इत्ता मर खप रही हो अपनी कोल का जाया होता तो पता नहीं क्या करती ’

बहने वाले तो यहा तो यहा तक कह देते—

“अरे तू इनके लिये अपने आपको मिटाये डाल रही है कुछ अपने लिये भी तो सोच,

आजकल तो अपनी आलाद भी बुढ़ापे मे सहारा नहीं देती यह पराये जाये है, इनका क्या भरासा”

पर कार्लिदी ने जैसे इन सब प्रश्नों को सुना अनसुना कर दिया था, उसे उस समय यह पान नहीं था कि यह लोक रीति है जो एक दिन सत्य होकर रहेगी ।

और जब उसी बेटे ने,जिसे 20 वष तक अपनी स्नेह धारा से सींच सींच कर सहलहाते विवसित वक्ष के रूप मे परिपक्व करने के लिये उसने अपनी खुशियो का होमायित कर दिया था, उसकी उपेक्षा करते हुए धक्का देकर उसके मातृपद को लाञ्छित किया था और अपने बाबूजी का अनादर करते हुए उनके प्राण तक लेने का प्रयत्न किया था, तब कार्लिदी को यथाय का बोध हुआ था ।

उसने निश्चय कर लिया था कि वह इनसे दूर चली जायेगी, और आज मरे पूरे परिवार के रहते हुए कार्लिदी ने अपना स्थानांतरण अत्यत्र करवा लिया है । इतने सदस्यों के होने पर भी आज कार्लिदी निर्वासिनी का जीवन जीने के लिये विवश है । वह परिवार से चाहे कितनी ही दूर चली जाये पर पति की सुरक्षा की चिंता उसे हर समय रहती है वह चाहती है—

उनका जीवन सुखमय हो,

ईश्वर बेटे को सद्वुद्धि दे

और वापस उस घटना की पुनरावृत्ति न हो ।

अवकाश के दिनों मे मा परिवार के किसी मागलिक वार्यों मे माग लेने के लिए जब उसे बुलाया जाता है तो वह अपना कतव्य समझ कर सारे काय करती है

एक अनजान सा भय उसके हृदय मे छिपा रहता है कि कहीं कोई अप्रिय घटना न हो जाये, जिसके लिये उसे जिम्मेवार ठहराया जाये, उसमे अब और अधिक आघात सहन करने की क्षमता नहीं है ।

कालचक्र

तूफान एक्सप्रेस बहुत तेज रफ्तार से चली जा रही थी, गाड़ी की खड खड में कुछ भी शोरगुल सुनाई नहीं दे रहा था। रात्रि के नौ बजते ही लोगो न अपनी सीटो से बैडिंग लेकर, बिस्तरे लगाने शुरू कर दिये थे, जिनका आरक्षण नहा था वे भी दरी या चादर बिछाकर नीचे अपनी व्यवस्था करन में लगे हुए थे। स्टेशन आने में थोड़ी देर थी।

ड्राईवर अजय बार बार घूर कर गीन सिगनल देख रहा था, पर सिगनल था कि दिखाई नहीं पड रहा था। बार बार आखें मलता, चश्मा साफ करता, फिर आखो पर लगाता पर सिगनल था कि दिखाई नहीं पड रहा था। आज उसने एक मिनट के लिये भी विश्राम नहीं किया था, इमलिय पक्कान कुछ ज्यादा ही हो रही है, पर वह इस बात को भी अच्छी तरह जानता है कि इस समय उसकी जरा सी भी चूब सकडो लोगो के प्राण सबट में डाल सकती है इसलिये वह सचेत है अपनी ड्यूटी के प्रति।

केवल कुछ घण्टे ही तो उसे ड्यूटी करनी है सिगनल देखत रहना है और गाड़ी चलना है।

जब कम्पाटमेन्ट के सारे लोग ऊधने लगेगे, तब भी वह गिद्ध की तरह सिगनल पर ही अपनी निगाह जमाये देखता रहेगा।

ट्रेन के गतय स्थान पर पहुचने के पश्चात यात्री अपन घर जाकर पक्कान मिटाकर सुन्व की सास लेगे, लेकिन अजय जब रिटायरिंग रूम में पहुच कर यह साचता है कि वह कुछ उल्टा सीधा खाकर पड जायेगा ता खाने का जी भी नहीं करता, अक्सर बिना खाये ही अधलेटा सा हो जाता है।

अगर देखा जाय तो अजय के लिए सर्विस में कोई आकषण नहीं रह गया है सर्विस तो क्या सच पूछो तो जिन्दगी में ही कोई आकषण नहीं रह गया है और फिर ये कायला भाऊ नौकरी।

रिटायरिंग रूम में लेट लटे अजय के सामन अतीत का वह पृष्ठ खुलन लगता है, जब वह महानगर के इंगलिश स्कूल में पढता था। बचपन में वह सबसे

जीनियस समझा जाता था। पढाई लिखाई में खेलकूद में सबसे आगे। पापा हमेशा कहते—

इसका तेज दिमाग इसे किसी अच्छी पास्ट पर जरूर पहुँचायेगा।
मेरे सपनों को यही साकार करेगा'

किसी भी बात की तरह तक पहुँचना, अजय की आदत में शामिल था। जब सब भाई मिलकर कोई नई पिक्चर देखकर आते तो खाने पीने की सुध छोड़कर घण्टा उस पर बहस करते।

बगला पिक्चर था वह कोई भी हो कैसी भी हा, छोड़ता ही नहीं था। वह बगला संस्कृति की इतनी अधिक प्रशंसा करता कि अक्सर उसका तब सुनकर हम वह सोचने को विवश हो जाते कि वह अपनी जाति की लड़की से शादी न करके अवश्य किसी बगली लड़की का ब्याह कर घर ले आयेगा पर किसे पता था कि उसे भीष्म पितामह की तरह आजीवन ब्रह्मचारी रहना होगा।

भीष्म को इच्छा मृत्यु का वरदान था मिला था पर अजय तो अपनी इच्छा से मर भी नहीं सकता उसे तो ससार में जीवित रहना ही होगा, उन स्नेहीजना के लिए अबोध शिशुआ के लिए जिनका एक मात्र आश्रय वही केवल वही है।

जय भी उसमें बहा जाता—

“भइया अजय शादी कर ला, मुख पावागे एक स एक अच्छी लडकियो के रिश्ते तुम्हारे लिये आ रहे है।

ता अजय तपाक से उत्तर देता—

‘ मेरे लिए क्या सुख और क्या दुख।

मेरे लिये नौबरी करना मजबूरी है, इसलिये कर रहा हूँ, नहीं तो मैंने कभी सविन करने की बात भी नहीं साची थी।

वैसे यह बात बिलकुल सही थी, न अजय के बाबूजी अचानक गिर पडत न उसके ऊपर ये शांति आती। पर मे फ्रिक्चर होने के कारण दो तीन मास बाबूजी को हास्पिटल में रहना पडा, जब ठीक हुये तो छडी लेकर चलने लग, तब कैसे हर्पोत्पुल से होकर घर घर मिठाई बाटी थी उहाने।

छोटा अमय जब घर से भाग गया था तो किस प्रकार चार दिन तक पागलो की तरह सारे शहर में दूढ़ते रहे थे। हास्पिटल, पाने में सब जगह तलाश की, अजय की माँ रो रोकर हलवान ही गई थी, उस समय अमय सिर पर हीरो जैसे लम्बे लम्बे बाल रखता था और जब कोई उससे बात फटवाने की कहता तो झुंझला कर कहता—

“मेरे क्या बाप मर गये हैं, जो बाल कटा दूँ” उसके मन में यह बात बँठा पाना बहुत मुश्किल था कि बाल कटवाना तहजीब में शामिल है, नहीं तो चेहरा रूखा और उदास लगता है। जब अजय घर वापिस लौटा था तो बाबूजी ने फिर सब जगह मिठाई बाँटी थी।

छोटी से छोटी खुशी को भी सर्वाधिक महत्ता देना उनकी आदत में शामिल था। छोटे बड़े सभी सदस्यों के लिये यहाँ तक कि दूरस्थ सर्वापियों के लिये भी वे अपने स्नेह का अक्षय कोष निरंतर दोना हाथों से लुटाया करते थे।

किसी को नौकरी दिलानी हा, नये सिरे से बसाना हो, कलकत्ता महानगरी में अगर किसी को ठहरने का ठौर ठिकाना न मिले तो उनका बवाटर सबसे लिये ऐसे आश्रय स्थल के समान था जहाँ सब एक ही सपन वृक्ष की छाया तले आकर विश्राम लेते थे।

कितने धुश होते थे, वे सबको इकट्ठे देखकर। उनका स्वयं का परिवार तो केवल तीन बेटा तक ही सीमित था पर अत्यन्त रिश्तेदारों के परिवार के बच्चे भी उनसे बेटा जसा ही स्नेह प्राप्त करते थे।

अपने घर ठहरने वालों को वे रात में उठ उठकर कम्बलें और चादरें ओढ़ाते, हर एक का सामान व्यवस्थित करते, नई नई चीजें बनाने का प्रस्ताव रखते, रोज नये नये स्थानों पर घूमने का कार्यक्रम बनाते। सबको एक छत के नीचे देखना ही उनकी इच्छा थी।

अपनी इस इच्छा का मूल रूप देने के लिए उन्होंने एक बहुत बड़ा बवाटर लेने का मानस बनाया था ताकि महानगर में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति को रहने का स्थान देकर अपनी ममता का कण कण बाँट सके। पर बाल के शूर हाथों ने अकस्मात् अजय से बाबूजी के स्नेह की छत्रछाया छीन ली।

ऐसे स्नेह विगलित पिता के घर में अजय ने द्वितीय सतान के रूप में जन्म लिया था। अगर बाबूजी असमय ही बाल कलावत न हाते तो शायद यह इज्जत झाड़वरी उनकी जिन्दगी का पर्याय न बनती।

अभी अजय पितृ श्रमाव से उबर भी न पाये थे कि मां भी उसी डगर की ओर चल पड़ी जहा से कोई लौट कर नहीं आता ।

मातृ पितृ विहीन दोनो भाई हर समय उाका मुह जाहत रहते थे, उनके लिये वही मा और बाप थे, बड़ा भाई था लेकिन बिलकुल शाह सच, ठीक बाबूजी की राह पर चलने वाला ।

यह ठीक है कि अम्मा बाबूजी कुछ बन बँलश छोडकर स्वग सिधारे थे पर दिन रात खुले हाथा से सच करन से कारु मा खजाना भी खाली हो जाता है और यह कौन सी अरबो की सम्पति थी,

अजय स्वय तो इतना भितव्ययी था कि अपने ऊपर एक पैसा भी खच करना उसे फालतू लगता था, क्वाठर हाथ से निकल न जाये फिर तो रहने की भी समस्या हो जायेगी । इसलिये सर्विम भी विवश होकर करनी पडी थी पर अम्मा बाबूजी की असामयिक मौत ने उनके हृदय के अन्दर इतना सूनापन एव रिक्तता भर दी थी कि व अन्दर तक हिल उठे थे, अक्सर कहते—

“पता नहीं लोगा के मां बाप इतने यूढ़े हाकर भी कसे जीवित रहते है?

हमारे तो अम्मा बाबूजी हम इतनी जल्ने छोडपर चले गये,

क्या हमारे ऊपर ही यह दु ख का पहाड टूटना था ?

उस समय उह चाहे कोई कितना ही बयो न समझाना पर जिन्दगी का कोई फल सफा उनकी समझ मे नहीं आता था, वे ईश्वर तक को गुनहगार समझते थे, जिसवे उनके सिर से ममता का साया इतनी जल्दी उठा लिया था

हर समय चेहरे पर दाना हथेलिया का टिकाय अजय गहरी चिंता म डूबे रहत, हसी ने तो जैसे उनके जीवन से हमेशा के लिए विदा ले ली थी ।

चिंता थी कच्ची गहस्वी की, जा बिना किसी स्त्री के रह बिखर रही थी । पर मे ऐसी कोई भी औरत थी न ना काई बहन, जा तीना भाइयो को दो राटी भी बनाकर खिला सके ।

काश उनकी कोई छोटी बहन होती, बहन है तो सही, सगी न सही मौसेरी तो थी ही । पर उहोने उसे सगी ही समझा था वार वह भी उन्हें कब परामा समझ सकी थी । पर वह इतने दूरस्थ प्रात मे बठी थी कि मौसी की

मौत का समाचार भी उमे न मिल पाया था और वह अपन भाइयो क अशुबिन्दु मे दो बू द अशु मिलाने से भी बचित रही थी । इसलिये अजय का यही प्रयत्न रहता कि—

“किसी तरह बडे भइया की शादी हो जाये उनका घर बस जाये,

अपनी शादी का ख्याल तो उहोने हमशा के लिए हृदय से निकाल दिया था । जिस रिश्तेदार के यहा भी अजय जाते, केवल एक ही बात छेडत—

“बडके भइया का ब्याह हा जाय तो मेरी ड्यूटी पूरी हा जाये, कम से कम घर ता समाजने वाला कोई था जाय”

अजय का प्रयास रग लाया, बडे भइया की दुलहिन के घर आत ही घर जसे सवर सा उठा । वैसे भी स्त्री के हाथ से सजा सवरा घर कुछ ज्यादा ही सुन्दर लगता है । घर करीन से और व्यवस्थित रहने लगा, हर समय हसी के कहकहे गू जन लगे । पर वह एक क्षणिक सुख स्वप्न था, जिसने कुछ ही दिनों मे भयकर दु स्वप्न का रूप ले लिया, एसा लगता है कि, ईश्वर से भी उस घर का सुख न देया गया, इमीलिये जब अजय को ड्यूटी पर लोको आफिस से यह समाचार मिला कि—

‘बडे भइया नही रहे

जल्दी चले आओ’

तो वे वही पर सिर पकड कर बैठ गये थे, उहू अपने चारो ओर मधरा सा घिरता नजर आया था—

“हे भगवान क्या यह कहर मुझ पर ही बरसना था,

पहले दाबू जी फिर अम्मा और अब बडे भइया’

अत समय दोना भाइयो को मिलना भी नसीब नही हुआ था, जबकि व दोना जहा भी जात, इकट्ठे ही जात थे ।

यह सही था कि दोनो भाइया मे गाहे बगाहे तकरार हो जाती थी, तर्क बितक सब चलते थे । दोनो ने लम्बा समय एक साथ बिताया था । उन मातृ-पितृ बिहीन भाइयो ने सुख दुख आधी तूफान भ्रभावात सब मिल कर भेला था ।

बड़े मइया की मृत्यु पर अजय का जार-जार रोत हुए दीवारों एवं दरवाजों से मिर टकराना इस बात का संकेत था कि बड़े मइया उनके लिये कितना बड़ा अभाव छोड़ गये हैं और इस दद के तूफान का वे अपने अदर कैसे समा सकेंगे पर दोनों छोटे भतीजे जो मइया की निशानी समझकर अपन सीने में लगाकर अजय ने दुख के ज्वार को अदर ही अदर समेट लिया था। किन्तु दिन तो ड्यूटी पर ही नहीं गये हमेशा यही कहत—

“मन भारी है, ड्यूटी पर जाने की इच्छा नहीं करती”

पर ड्यूटी ता उन्हें करनी ही थी, उन नह मुन्ना के मविष्य के लिए जो बड़े मइया की उनके पास अमानत थी और जिसके सिय सारी उम्र हृदय पर पत्थर रखकर उन्हें जीना पडेगा।

पर अजय ने दोनों भतीजों को पता नहीं किस देवी प्रेरणा के वशीभूत होकर रम सत्य से माक्षात्कार तो करा ही दिया था।

“तुम्हारे पापा हमेशा के लिए दूर चले गये है, अब वह कभी नहीं जायेंगे”

और इस वाद्य को कराने के लिए ही वे मइया के दाह संस्कार के समय बच्चों को अपने साथ ले गये थे जहा उ हाने अपने बाजूजी को चिता में जलत देखा था। अब जब भी कोई बच्चों के सिर के ऊपर महानुभूति से हाथ फेरता तो वे स्वयं कह उठते—

‘हमारे पापा मल गये, उनको आग में जला दिया’

जब कि उन अवोध बालिका का मृत्यु जस मयार सत्य से आक्षात्कार कराना एक बटोर काय था। पर अजय ने उनको परिस्थितियों से सघप करने के लिए बचपन से ही यथाय से उनका परिचय करवा दिया था।

आज जब अजय अनीत व जाइने में भावता है, तो लगता है, सुख के एक कण का रस्मावादन भी उ होने अपने लम्बे जीवन में आज तक नहीं किया है। सारे सुख स्वप्न बालूका स्तूप की तरह ढह गये है।

अक्सर भामी से इसी बात को लेकर बहस छिड जाती है, जब वे दोनों अपनी जिदगी का लेखा जाखा करने बठते है तो आवेश में आकर एक दूसरे पर दोषारापण भी करने लगत है। दुखी दोनों ही है, मवस्व दाना का ही छिन गया

हे ! दाना ही हर समय ईश्वर व भाग्य का कासते हैं पर अजय का दुःख सीमा तोत है तभी तो वे मुस्से में घाबर बोल पडते हैं—

“आपका क्या गया अरे मइया चने गये तो क्या, उनकी निशानी के रूप में ये बच्चे तो आपके पास हैं

आपको जीने का सहारा तो मिल गया पर मरे तो सुख दुःख का भागी दार बडा भाई था, वही ईश्वर ने मुझ से छोन लिया”

अजय मइया हर एक बात में बाल की खाल निकालने लगे हैं अगर मामी के पीहर बाल उनकी जरा सी भी आधिक सहायता करते हैं तो अजय का अपमान व उपेक्षा का अहसास होता, अगर मामी का छोटा भाई कतव्य वश कुछ ज्यादा बहन और बच्चा के लिए कर भी दता तो अजय को ऐसा प्रतीत होता माना वह दया या सहानुभूति वश ऐसा कर रहा है उन्हें ऐसे वृत्त्य झूठी सहानुभूति प्रदर्शित करत लगते हैं और इसीलिये व सारा आक्रोश मामी के सामने व्यक्त करते बहने लगते हैं—

“मैं आप लोगो के लिये दिन भर मरता खपता रहता हू

आपकी हर महीन खच के लिए बच्चा को पालने के लिए मासिक वेतन लाकर देता हू, फिर भी आप दूसरी का एहसान नती है।’ मामी का यह बातें अच्छी नहीं लगती, वह भी क्रोधावेश में आकर बडबडान लगती—

‘क्या हुआ अगर मेरे भाई न कुछ दे दिया ता ?

अरे समय है मेरा भाई, अच्छा खाता कमाता है अगर थाडा बहुत मेरे और बच्चा के लिए कर भी दिया ता कौन सी आपत टूट पडी ?”

पर अजय का जीवन दुःख के बोझ से इतना अधिक बोझिल हो चुका है कि सारा ससार ही विषमय लगता है। अपनी व्यथा का शब्दों के माध्यम से मुट्टिया तान तानकर वह व्यक्त करता है पर व्यथा का अन्त नहीं।

अजय की इस व्यथा को बाटने वाली एक मात्र बिदा मीसो ही है जो अपनी बहन की निशानी को अपना समझ कर उमके दुखते घावो पर मरहम रखती है।

वे भी बीमारी स इतनी जजर हो चुकी हैं कि बिस्तर पर पडे रहना ही उसकी नियति बन चुकी हैं।

जब भी अजय उनके सामने दुःख से विचलित होकर फफक पड़ते हैं और व्यथित नेत्रों से सवाल पूछते हैं -

“बताइये मौसी जी मैं क्या करूँ ?

क्या मैंने अपनी तरफ से कोई कोर कसर छोड़ी है ?
तो भी परिवार में सुख शांति नहीं है ।

मेरी बुद्धि काम नहीं करती कि मैं क्या करूँ ।”

सबसे ज्यादा चिंता तो उन्हें उस छोटे मझ्या अमय की है, जो अम्मा बाबूजी के न रहने से मूक बघिर की तरह इधर उधर मटकता है, थाली परोस दी तो रोटी खाली नहाने को कहा गया तो नहा लिया, जीवन के प्रति कोई उत्साह या लगाव उसमें शेष नहीं रह गया है ।

अजय अपने दुःख से दुःखी तो है ही, पर अमय की चिंता उन्हें प्रस्त किये हुए है, वे उदास होकर अक्सर मौसी से कह उठते हैं—

मौसी अगर मैं न रहा तो इस बेचारे का क्या होगा ?

कौन पढ़ेगा इसे ?

यह अपनी मूकता का भार कब तक ढोता रहेगा ? यह तो स्वयं एक जिंदा लाश है इसकी उपक्षिप्त जिंदगी का भागीदार कौन बचेगा ?

क्या विधाता की क्रूर दृष्टि से इसे कभी मुक्ति मिलेगी ? क्या मैं चैन की सास लेकर जीवन के अन्तिम क्षणों में अपने उत्तरदायित्व को पूरा कर सकूँगा ?

“मौसी जी मेरी अंतिम इच्छा यही है कि, मृत्यु से पूर्व मुझे यह विश्वास हो जाये कि अमय का जीवन सुरक्षित है और ससार में कोई और उसके भी सुख दुःख का भागीदार है”

यह कहते कहते अजय निहाल सा होकर मौसी के सामने रो पड़ता है । उस समय बिंदो मौसी ही अपनी शारीरिक पीड़ा को विस्मृत कर अजय को सात्वना देती हुई कहती है—

“अजय तुम्हें जीवित रहना ही होगा,

आत्महत्या ससार से पलायन है,

परिणति

जीवन के उतराढ़ की राह पर सड़ी शत्रुन सोच नहीं पा रही है कि उस इन वर्षों में क्या उपलब्धि हुई ? मुडकर अतीत में आइने में भाकती है तो पानी हैं अपने आप में उस तेरह वर्षीया बालिका का रूप जिसे गुड्डे गुड्डियो की तरह छोटी आयु में ही ब्याह दिया गया था, किशोर वय के भास्कर के साथ और जिसकी भावरे पढते समय रोशनी की जगमगाहट में अग्नि के फरे लते समय उसने एक हल्की सी झलक नर देखी थी ।

उस समय उसके लिए विवाह का कोई अर्थ भी तो नहीं था, केवल अच्छे अच्छे कपडे पहनना, गहने पहनकर सजना सवरना एक मात्र बौतुक ही तो था उसके लिये अपना ब्याह ।

धीरे धीरे उसमें समझ आती गई थी, कंशौय उन दोनो के बीच से जैसे छलाग मारना निकल गया था, भास्कर के सम्पक में आने से वह बालिका से बधु बन गई थी, पाच वर्ष के अतराल में ही बहुत जल्दी दो सुन्दर से फूल उसके उपवन में खिल उठे थे और जीवन बहुत मधुर गति से चल रहा था । पर वह दिन शत्रुन के जीवन में भयकर भूचाल लेकर आया, जब एकाएक उसे टेलीग्राम मिला—

“भास्कर की हालत ठीक नहीं है, जल्दी चले आवा”

कुछ मास पहले ही ता भास्कर अपने बडे माई के साथ बम्बई के लिये खाना हुआ था बहुत समझाया था सवने—

“यही कोई छोटी मोटी नौकरी करलो, परिवार के साथ रहाय”

पर भास्कर ने यह कहकर सजका रुप कर दिया था —

“महगाई बहुत बढ गई है, बच्चा के होने से खर्च भी बढ गया है । अच्छी सविस मिलने पर ही इनको उचित शिक्षा दे पायेंगे और इनकी आवश्यकताये पूरी कर सकेगे”

जब शत्रुन ने अपनी सहमति न देकर रूने का आग्रह किया था तो

उसे यह दिलाशा देकर भास्कर ने शात कर दिया था—

“वहा जाकर जैसे ही जम जाऊगा, सब कुछ व्यवस्थित हाने हो तुम सबको बुला लूँगा”

“पर वहा बुला सवा था भास्कर शकुन को अपन पास, उस वया पता था कि उसके लिये मौत का बुलावा आ पहुँचा है । वंस जिस समय वह विदा होकर बम्बई जा रहा था, उसी समय कुछ अपशकुन की छाया सी उसे सामने बिसाई पडने लगी थी । जब बडे भाई के साथ विदा लेकर वह घर से निकला उसी समय लोगो ने टोकत हुए कहा था—

‘एक मा के जाये दा सहोदर भाई साथ साथ विदा नही हाते अपशकुन होता है ।

पर उस समय उन दानो ने इन बाता को अ धविश्वास बहकर नकार दिया था, लेकिन आज वह सारी घटनायें चित्रवत उसके सामने स्पष्ट हो रही थी ।

तार की माया पडते ही उसका सारा शरीर पत्ते की तरह धर-धर कापने लगा और वह किसी अनजान भय से आशंकित हाकर जहा खडी थी वही पर धम्म से बठ गई ।

तुसुम और सपन दाना बच्चा को मा के पास छोडकर, जब वह मइया के साथ बम्बई पहुँची ता वहा उसे भास्कर का मृत शरीर ही दृष्टिगत हुआ था उसकी बे शरारती चूहल सी बरती आखें हमेशा के लिय बन्द हो चुकी थी । विक्षिप्त सी होकर वह गिर पडी थी उसके ऊपर ।”

उसके माग्य मे विधाता ने जा बघव का दुख लिख दिया वह ता उसे भोगता ही पडेगा”

यह समझानर सबने उसे सात्वना दी थी । यह भी ऊपर से शात हो बती थी, पर उसके शरीर के अंदर जो यावन का ज्वार उत्ताल तरंग मार मार कर उसे आलौडित कर रहा था उसमे अपन आपका सभाल पाना बहुत मुखिल था ।

जब वह अरनी उम्र की हमजालियो को हीज और बरवा चौध पर रगीन साल पीली जरी की साडी पहने सजी सवरी देखती तो उसके बलेज म हूक सी उठने लगी ।

उसे तो बार बार यही याद दिलाया जाता कि यह विधवा है, मजना सवरना उससे लिए ठीक नहीं, समाज के लोग क्या कहेंगे, पर उसे समझाये वह अपने हृदय को। उस समय वह भास्कर की तस्वीर के सामने जा खड़ी होती और उससे अनगिनत प्रश्न पूछती जो निम्नतर ही रहते—

“क्या चने गये तुम मुझे इस तरह छोड़कर ?

तुमन ता जीवन भर माय निमाने का वादा किया था ?

फिर मुझे इस तरह भटकने के लिये क्यों छोड़ दिया ?” उसे इस तरह राते बिलसत देखकर बुसुम और सपन उसके इर्द गिद बांहों का घेरा डालकर उससे लिपट जाते, जिनका कोमल स्पर्श उनके शंशक की भोली शरारतों से रम-कर वह अपने दुःख का भूल जाती उनको देखकर वह अपने भविष्य के प्रति आशस्त हो उठती।

वह अकेली कहा है, भास्कर की निशानी है उसके पास? वह इह उची से उची शिक्षा दिलायेगी, उनको भविष्य को उज्ज्वल बनाने के लिए उसे साहस से काम लेना होगा और तब शत्रुन में अपने जीवन के बारे में एक नया निर्णय ले लिया।

अन्धायु में ही विवाह हो जान के कारण उसन जिस पढाई को छोड़ दिया था, उसी को वापिस फिर शुरू कर दिया।

समय गुजरता जा रहा था और समय ने उसे इतना ज्ञान अवश्य दे दिया था कि उसे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होना ही पड़ेगा।

कब तक वह ससुराल वालो थोर मायके वाला पर बोझ बनी रहेगी ?

कब तक वह अपनी और अपन बच्चा की छाटी मोटी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये दूसरों का मुह ताजती रहेगी।

इसलिये उसने पहल आठवीं की परीक्षा प्राइवट पास की फिर हाईस्कूल परीक्षा का फाम भ्र दिया। हालांकि यह सब करना कोई सरल बात नहीं थी, जत्र वह साइकिल पर चढ़कर परीक्षा देने स्कूल जाती ता कई जोड़ी निगाह उसे देखती रहती। आपस में बानाफूसी करती रहती, क्याकि उसके युग की परम्परा नहीं थी कि विधवा वह स्कूल में पढ़ने जाये और वह भी साइकिल पर सवार होकर।

स्वयं उसके पास समुद्र में उसके बाय से अप्रमत्त रहते अगर कोई उससे मिलने के लिए आता और उसके बारे में पूछता—

“शकुन कहाँ गई ?

कब तक आयेगी,

घर पर जब मिलगी”

कोई हमसे पूछ कर जाती है क्या ?

उनकी ता मायता यही थी कि उसने पिछले जन्म में कोई बहुत बड़ा पाप किया था, इसलिये उसे वैधव्य का दुख भोगना पड़ा और उसे घर की चार दीवारी में ही घुट घुट कर मर जाना चाहिये, बाहर निकलना उसके लिये बर्जित है।

उस पग पग पर कितना लाछन और अपमान सहन करना पड़ता था उसके पास धन तो नहीं था कि वह दूसरों की सहायता कर सके पर जहाँ तक हाँ सके वह शरीर से सबकी सेवा के लिये तैयार रहती थी, लेकिन लोग इसका भी गलत अर्थ निकालते थे। अगर किसी स्त्री के पति से वह हसकर दो बातें भी कर लेती तो उन्हें लगता कि उसे उनके पति को बस म करने का पड़स्यार रचा जा रहा है। दूसरों के सामने वह स्त्रियाँ यह कहने में नहीं चूकती कि

इसने तो मेरे पति पर गद्गु कर दिया है

इसके कारण हमारी जिन्दगी नरक बन गई है

अपने पति के आशिकाना मिमांसा पर पर्दा डालकर वह उसे ही दोषी ठहराती वह चाहे कितनी ही निष्कलक क्यों न हो पर उसे अनेक अश्लील व्यंग्य बाणों का शिकार होता पड़ता।

बदलते समय न जीवन के घात-प्रतिघात न शकुन में एक नया आत्म विश्वास उत्पन्न कर दिया था, वह अपने जीवन को तिल तिल करके जलता नहीं देखना चाहती थी, इसलिये उसके माग में अनेक व्यवधान आने पर भी उसने पढ़ाई का क्रम जारी रखा।

ऊँची शिक्षा प्राप्त करने उसे नियमों के तहत नौकरी भी मिल गई, हालाँकि इसके लिए उसे जी-नोड परिश्रम करना पड़ा था।

उसने कुसुम और सपन का भी अच्छे स्कूल में प्रवेश दिलाकर सदा पढ़ने के लिए प्रेरित किया। बच्चा का पिता की कमी महसूस न हो इसके लिये यह आवश्यक प्रयत्न करती रही।

दानी बच्चे भी यथाथ से परिचित हो चुके थे, पढाई उनके जीवन का पर्याय बन चुकी थी। उनके मानस से यह भावना धर कर गई थी कि उच्च ऊँची शिक्षा प्राप्त कर उन्नति के उच्च साधन पर पर पहुँचना है।

उसी की परिणति है कि आज सपन डाक्टर बन गया है एवं कुसुम एक अच्छी युवा लेखिका के रूप में ख्याति प्राप्त कर रही है।

जिस शकुन की नारी जाति उपमा की दृष्टि से देखती वही आज नारी निकाय की संस्थापिका, महिला मण्डल की अध्यक्षता बन चुकी है। नारी शिक्षा और समाज सेवा के हर क्षेत्र में शकुन सक्रिय रूप से कार्य कर रही है।

आज शकुन से मिलकर सभी का सुकून मिलता है। किसी भी वर्ग की नारी को जो असहाय है उसे आर्थिक रूप से आराम निभार करना शकुन के जीवन का लक्ष्य बन चुका है,

वह अपने लिये जीवित नहीं है उसने नारी जाति का शोषण मुक्त करने का सफल करके उसके उन्नति के लिये अपना जीवन समर्पित कर दिया है।

बाल विवाह, बंमेल विवाह, वृद्ध विवाह जैसी कुरीतियाँ जिसमें नारी जाति का शोषण होता है और जो मातृ शक्ति के लिए कलक है उनका विराय करना ही उसका धर्म एवं कर्म है।

दहज की बलिबंदी पर जिन मासूम कलियाँ का आहत हान के लिये विषय किया जाता है, शकुन उनका सम्बल है। उसकी दृष्टि अब स्वकेन्द्रित नहीं रहा विस्तृत असीम आकाश तक उसने उन फँस चुके हैं।

कल तक जो शकुन उपक्षिप्त और प्रताडित थी, असहाय और अनाथ थी आज अपनी श्रम साधना, सच्चो रागत, निम्बार्थ निध्वाम सेवा से नारी जाति न लिए आदेश है।

संत्रास

प्राज्ञ व फिर उसके मौजूदे म आय थ ? सपेद भय कपडे पहन हुए, चहर पर सतानुभूति का मुसोटा लगाय, विनम्र मुद्रा म हाथ जोडत हुए थे साग फिर उमके घर के सामने गडे थ ।

पाच बप पहले भी व इसी तरह आये थे वही आम्वासा, दिलाशा के चार द्विअधक गवाद दोहरात हुए—

‘हम आपके और जनता जनादन के सेवक है । हमगे जो बन पडेगा हम आपके लिय अवश्य करेगे ।

हम एक जवमर ता गीजिय ।

हम आपका विश्वास दिलाते है जि आपकी हर समस्या के लिय विधान मना और ससत् म आप लोगो के प्रतिनिधिया, नेताभा, विधायका एक सासदा क जीवन म आज तक काई भी बदलाव नही आया, अपितु उनके बंधव और ऐश्वय म उत्तरातर प्रगति ही हाती रही है, उनके घर कोठियो म बदल गये है और काठियो म आलीशान, आधुनिकतम गुन मुविधाभा से युक्त बगला का स्थान ल लिया है उनके खेत आज फाम के नाम से जान जान हैं जहा गरीबा का शोषण और बगुआ मजदूर मजदूर लेखन का मिलत है उनका जावन एश्वय और भोग का पयाय बन चुना है ।

पर बज्रपात हुआ है श्रीमान पवज ओर उमके परिवार के हर सदस्य का कमजोर कर रम दिया ह ।

बह गुहार कर रहे है, सहायता के लिए प्राबना पत्र भेज रहें है, समाचार पत्रा के माध्यम से अपनी स्थिति स्पष्ट कर रहें है पर उनकी दयनीय स्थिति पर काई ध्यान नही देना ।

कहा गय सारे वाद और आशवासन दन वाले मुन्वीट जिन्होन सबल्प लिया था उनकी सुरक्षा का उनके अस्तित्व का बचाय रखन का और कटो को दूर करने का पर उह कहा फुरसत है किसी को मुडकर दखन की घावा पर मर-हम रखने की व तो हवा की भांके की तरह आय और आधी की तरह बते गये।

श्रीमान पक्ज का इक्कीता पुत्र घीरज छ मास से हास्पिटल मे पढा जीवन मृत्यु से सघष कर रहा है । छ बहनो का लाडला एक मात्र भाई घीरज जिसने धमी यौवन की देहरी पर अपने बदन रखे थे, जब वे पाच वष पूव अपना हाथ जोडे, मतदान की याचना के लिये उसके घर के सामने जा खडे हुये थे, उस घीरज की चंचलता धाकपट्टा चेहरे की लावण्यता और व्यवहार कुशलता से केवल मोहल्ले के लोग ही नही अपितु धाने वाले जन प्रतिनिधि भी प्रभावित थे । वह भी अपने किशोर वय के साथिया के साथ उनका चुनाव चिन्ह लेकर प्रचार करता, नारे लगाता, अदम्य उत्साह से परिपूर्ण था, तब उसे क्या पता था कि एक दिन इही के सिद्धांत उसकी जान के ग्राहक बन जायेंगे ।

बसी आधी सी चली थी, सम्पूर्ण जनमानस उस भ्रमावात से प्रभावित हा गया था । सारे छात्र तीव्र आश्रोस से मर उठे थे ।

यह सही है कि निम्न वय अनुसूचित जाति को नौकरी से आरक्षण मिलना चाहिये पर एक साथ खेलने और एक साथ पढने वाले उन किशोर और युवा पीढी के दिल और दिमाग मे किसने जहर भर दिया था यह कौन जान सकता है ।

जा बल तब एक दूसरे के लिये मर मिटने की तैयार थे, एक दूसरे पर अपने प्राण न्यौछावर करने मे नही हिचकते थे वही परस्पर धृणा, उपेक्षा, प्रति-शोध की विषम ज्वाला मे जलने लग थे ।

उनका यह आक्रोश चरम सीमा पर पहुच गया था, जब छात्रो ने परीक्षा भवन मे परीक्षा का बहिष्कार कर दिया था, कापिया फाड डाली थी, पर्नीचर तोड डाल थे और इतने उग्र हो चुके थे कि किस समय क्या अप्रिय घटना घट जाये कहा नही जा सकता था । मुठ्ठी बाधे नारा लगाते छात्रो का यह विशाल समुदाय देखते ही देखते सडको पर आ गया था ।

घीरज के माता पिता भी इधर कुछ दिनों से इस बात पर ध्यान रखे हुये थे कि आजकल घीरज अखबार की सुखियो को गोर से पढने लगा है दूरदशन पर अगर वह थोडी सी भलक भी छात्रो के आत्मदाह की देख लेता है तो उसका पूरा चेहरा लाल हा उठना है, यह बाबूजी से बहस भी करने लगता है—

“पिताजी हम लोगो का क्या होगा ?

हमारे भविष्य को अ प्रकार के गत मे डबेल दिया गया है ?

क्या हम लाग यूनिवर्सिटी की उपाधि इसलिये प्राप्त कर कि मात्र हम शिक्षित समझा जाय ?

या हमें प्राप्त नाग से आर्थिक लाभ जीवन में कभी नही मिलेगा ?

क्या हमारी शक्तिव योग्यताया का मूल्यांकन हमारी उपेक्षा करने ही किया जायेगा ?

पिताजी यह अन्तर्द्वन्द्व न केवल मेरा है, अपितु मेर ही समान भारत के कराडो करोडा शिक्षित युवाओ का है जिनके भविष्य के साथ सरकार न धिनीना एव अमानवीय व्यवहार किया है ।

— धीरज बटा तुम्हारा सोचना सही है, आज युवा पीढ़ी के सब का बाघ टूट चुका है केवल राजधानी ही नही अपितु भारत के कोने-कोन से युवा शक्ति प्रदर्शन पर उतार है, आत्मदाह की तबरेँ अस्त्रबारा के मुण्ड पृष्ठ पर छप रही है ,

लेकिन मरे बटे आत्मदाह आक्रोश की सही अभिव्यक्ति नही, यह ता सघपो से भागकर आत्मदाह करना है, पलायन की यह प्रवृत्ति मनुष्य के लिए अभिशाप है । जीवन का समाधान नही ।

वे तो अपने जीवन से हाथ धो बैठते है, लेकिन जो लाग अपन मिद्धाता पर अडे हुये हैं वे इस बात को शायद भूल जाते है कि वे भी किसी के पिता है और एक बाप के लिए जवान बेट की मौत के दु ख से बडा दु ख दुनिया में कुछ भी नही होता ।

अक्टूम्बर मास की द्वितीय सप्ताह या सवेरे सपरे धीरज घर से यह कहकर निकला था कि —

‘कुछ जल्दी काम है दास्ना से मिलना है, घट दा घटे में बापिन आ जाऊंगा ।’

उहाने उसका द्वारा कही गई बात को सट्टज रूप में ही लिया था । उपर में तो शांत दिखने वाल उस सुदर्शन युवा के अतमन में कसा तूफान उठ रहा था, इससे वे भी परिचिन थे ।

दोपहर एक बजे तक मा खान पर उसकी प्रतीक्षा करती रही, फिर यह सोचकर कि दोस्तो न जाग्रह पूवक कुछ खिला दिया होगा कोई अब तक भूखा थोडे ही बठा होगा उसने खाना खानर रमोई को व्यवस्थित कर कुछ दर

विधाम का मानस बनाया ही था, तभी एकाएक बहुत तेजी से कालकेल बजने की आवाज सुनाई पड़ी दरवाजा खोलने पर देखा दो छात्र घबराई हुई हालत में दरवाजे पर खड़े थे उनके चेहरे पर हवाइर्या उड़ रही थी वे जल्दी जल्दी भराई हुई आवाज में बोले—

“आटी जी, आटी जी, धीरज जल रहा है,

बीच सड़क पर जल रहा है उसे बचा लीजिये ।

आटी, हमारे दोस्त को बचा लीजियेन आटी”

उनकी आंखों से लगातार आसू बह रहे थे घर में उपस्थित दोना छाटी बहना ने जब इस तरह सबको रोते हुये देखा तो वे भी कहने लगी—

“मम्मी तुम जाओ जल्दी जाओ, हमारे भइया को बचा तो मम्मी हम घर दल लेंगे आप जाओ न मम्मी”

धीरज की मा की आंखा स अश्रुवपा हो रही थी, घबराहट में कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे धीरज के पिताजी दफनर गये हुए थे उह भी समाचार देना जरूरी था उसने जल्दी से फोन नम्बर मिलाकर फोन किया तथा स्थान बताकर कहा वही पहुँचे—

‘म जल्दी में हूँ, आप भी वही पहुँचे ।

हडबडाहट में इमसे कुछ ज्यादा बोलने की गुजाइस भी नहीं थी वह जैसी हालत में घर में बैठी थी वैसी ही हालत में चल पड़ी, जल्दी बाजी में रिक्शा ही हाथ लगा उसने दुगुने पैसे मागे पर इस समय पैसे कौन देसता है । जैसे ही वे उस स्थान पर पहुँची उनकी आंखे फटी की फटी रह गई, उसका

इक्लौता पुत्र धीरज जल रहा था पास ही कैरोसीन तेल का डिब्बा पड़ा था, उसका सारा शरीर बुरी तरह से झुलस गया था, पुलिस उसे बचाने की चेष्टा में और जोर से पकड़े हुये थी लेकिन समय पर पहुँच कर उसे जलने से रोक न सकी थी, उसने चारों तरफ तडके घेरा बनाकर तीव्र आक्रोश प्रकट कर रहे थे ।

धीरज की मा न इसके पहल एक दा केश जलने के दले थे जिनको देख कर वह सिहर उठी थी, लेकिन आज वो जा जल रहा था वह उनकी आत्मा का शरीर का अंश था वे बन्धवास से होकर जोर जोर से छाती पीटने लगी—

“अरे बचाओ रे बोर्ड, मेरे धीरज को बचाओ ।”

अरे मुझे क्या पता था वा हम ये दिन दिलावेगा

हे भगवान मेरे धीरज का बचा लो ’

धीरज के साधिया की आवा से जवाला फूट रही थी, उनके नयुने पडक रहे हैं और चेहरे की भावमगिमा यह सबेते दे रही थी कि वे कुछ भी करने के लिये कृतसकल्पित है। पुलिस के जवान बडती हुई भीड को रोकने मे अपने आपको असमथ पा रह थे ।

उसी समय धीरज के पिताजी दौडते मागते उसी स्थान पर पहुँचे गय । भीड का चीरते हुए ‘धीरज, धारज’ नाम पुकारते हुए उसके पिता जैसे जैसे धीरज के पास पहुँचने का प्रयास करते पुलिस का रेला उह पीछे धकिया देता । भीड मे कुछ छात्र ऐसे भी थे जो धीरज के साथ अक्सर उनके घर आते और उह अच्छी तरह पहचानते थे उ ही मे से किसी ने चिल्लाकर कहा—

“यह धीरज के पिताजी है यदि अब भी इह राकने ता प्रयास किया गया तो पुलिस की जीप मे आग लगा दी जायगी, और भीड पुलिस वालो से गिन गिन कर बदला लगी”

इस आवाज के साथ ही एक क्षण के लिए सनाटा छा गया और उसके पिताजी दौडते मागते धीरज के पास पहुँचे ही थे कि इतने मे पुलिस एम्बुलेश म उसे बिठाकर मा के तथा दो दास्तो के साथ उसे अस्पताल ले गयी । जब पिताजी हास्पिटल पहुँचे तो वहा इमरजेन्सी वाड मे धीरज को भुलसी हुई हालत म दख कर अपने ऊपर नियंत्रण न रख सके और जोर जोर से चिल्लाकर रोने लग—

“ये तुमने क्या किया बेटे ?”

अरे अपनी मशा कम से कम हम तो बताते ?

तुमको कितना समझाया था कि आत्मदाह पाप है, पर तुम भी उसे रास्ते पर चल पडे ।

अरे बेवा तुम्ही तो हमारी आशा हा, हुदापे की लकडी हा, कुछ हमारे बारे म भी तो सोचा होता ।’

ऊपर धीरज की मा भी हिचकी बाध राध कर रोय जा रही थी उह चुप कराने के सारे प्रयास निष्फल हो चुके थे उनका जिगर का टुकडा आज इस

हासल म पढा था कि देखते ही बलजा मुह मो घाता था ।

धीरज बहोश था डाक्टरा का दल उसकी परिचर्या म लगा हुआ था । धीरज के माता पिता की काम्निव अवस्था देगी नहीं जाती थी । हास्पिटल के सबसे बडे डाक्टर ने मि पबज के बध पर हाथ रखते हुए कहा—

धीरज रखिय मि पबज, अपने हाश हुवाग म आइये, हम पूरी जेप्टा बर रहे है आपके बेटे को बचाने की,

ईश्वर से प्राथना करिये कि आपका बेटा ठीक हो जाये ।”

धीरज इमरजेसी घाड मे जीवन मृत्यु से सधप बर रहा था, बाहर सारा छात्र समुदाय उसका हाल जानने के लिये चिन्तित था लेकिन उनका भावग चरम सीमा पर था ।

उहाने अस्पताल के मेनगेट का घेराव बर रखा था । प्रेस सवाददाओं फोटोग्राफरो का रूजूम उमड पड रहा था । पक्ष बार विपक्ष के समी नता उसका देखने के लिए उमडे पड रहे थे । लेकिन छात्रो ने नेताओं का भी घेराव बर दिया था उह अदर आने से तथा धीरज को देखने से रोव दिया था । कुछ लोग विवश हाकर धीरज को बिना देने ही चले गये थे, जो बहा घाये थे के आश्वासन दे रहे थे ।

“आपका बेटा बच जायगा मि पबज हम सरकार स आपको क्षतिपूर्ति करवायेंगे”

कुछ की आई पी लोगो न उसके लिय विषय प्रबध करन का आश्वासन भी दिया । सत्र तरफ उसी के साहितिक वृत्त्य की चर्चा थी । समी अगवारो के मुखपृष्ठ पर उसकी तस्वीरो के तथा माता पिता की तस्वीरो स मरे पडे थे । वह एक दिन म ही समस्त युवा शक्ति का हृदय सम्राट बन वठा था । छात्र संगठन दला म उससे मिलने आत । पर वह तो अचेतन अवस्था म पडा था बा भी यही बहूत—

“आटी जी अकिल जी घाव दुखी न हा हम आपक साथ है ।

आप किसी बात की चिंता मन बरिये,

धीरज ने हमारे अधिवारो की रक्षा के लिये अपन प्राण सकट मे डाल है, हम उसके लिए कुछ भी कौर कसर नहीं उठा रखेगे ।”

लेकिन आज छ महीन हो गये है, धीरज अब भी हास्पिटल म पडा जीवन मृत्यु से सघष कर रहा था, पर पास है केवल माता पिता बहों और कोई दो चार अतरंग मित्र तथा नजदीकी रिश्तदार ।

य सारे आशवासन अब धूमिल पड चुके है अपन पास जा भी पसा था वे उसके माता पिता सच बर चुके हैं, महंगी दवाइया, इजेवशन वे उसके लिए लाते रहे है पर धीरज की हालत म सुधार नही हुआ ह उहान जो घाडा बहुत पसा उसकी बहिनो के शादी के लिए बैका मे जमा कर रक्खा था वो भी उसका इलाज कराने म समाप्त हो गया है । जी पी एफ और बीमा से भी वे सान ले चुके है, उसकी मा के सार आभूषण भी धीरे धीरे करके सुनार के पास गिरवी रखे जा चुके है केवल इसी आशा से कि धीरज ठीक हो जाये पर सार प्रयास बकार हा गये है ।

बटे के लिय सब कुछ लुटाकर व बगाल बन गये हैं अखबारों म उनका जापन छप रहा है कि उनमें पास अब धीरज के इलाज के लिए कोई गुजाइश नही है लेकिन तब बाना म तेल डाले बठे है ।

कहा गये बचार व सार वादे आशवासन, सहानुभूति सूचक शब्द शायद तब चुनावी लहरा म बह गये है ।

वापस चुनाव की सरगमिया तीव्र हो रही है । सब अपनी अपनी अपनी रोटी सेकने मे और वोट पक्के करने मे लगे हुए है । सत्ता सुख का उपलब्ध करने के लिए दल बदला का दौर चल रहा है, वे जीप कारा मे घूमकर चुनाव प्रचार करने म व्यस्त ह । चुनाव प्रचार म पानी की तरह पसा बहा रह है ।

किसे चिन्ता है उस धीरज की, जा अस्पताल के एक वाड मे पडा अपन जीवन से सघष कर रहा है ।

य फिर विजय का सेहरा बाधकर जुलूस निकालेंगे पाच सितारा हाटना म इनके लिये मध्य आयोजन हागे । सघष लेते समय व सम्पूर्ण जनता को आश्वस्त करेंगे लेकिन मि पक्ज का इकलीता घेटा धीरज छ बहनों का लाडला भाइ धीरज तब भी अस्पताल क किसी वाड मे लेटा अपने जीवन से जूझ रहा हागा । उसने माता पिता टकटकी लगाय मू उसकी आर दग रह हाग लेकिन उनकी ध्यषा मुनने वाला समझन वाला शागद कोई नही है ।

धीरज के भविष्य के प्रति अब वे धीरे धीरे निराश होते जा रह है और उनका अपना धीरज भी छूटता जा रहा है ।

सच ही तो है जब समय विपरीत हो जाता है और मनुष्य हर तरफ से बूटों से घिर जाता है उस समय अपने भी पंखों से उड़ते हैं, चारों तरफ झंझर ही झंझर लगता है । घोरज के माता-पिता के जीवन में छाया सदास का यह झंझर शायद कभी समाप्त नहीं होगा ।



“आत्मबोध”

नेहा के गले में अपनी नहीं नहीं बहने डालकर सोनू अबसर एक ही प्रश्न पूछ बैठता है—

बताओ ना मम्मी । पापा कब आयेगे ? जब वे मेरे लिये ढेर सारे खिलौने लायेगें ? सबके पापा उनके लिये चीजें लेकर आते हैं पर मेरे पापा क्यों नहीं आते ?

बताओ न मम्मी पापा कब आयेगे ? क्या वो अपने बेटे से ताराज हैं ? मम्मी ! तूही सी जान और ढेर सारे प्रश्नों का अम्बार । पता नहीं उसके इस छोटे से मस्तिष्क में इतने सारे प्रश्न कैसे उमर कर आते हैं इस पर भी वह उसे आश्वस्त करने के लिये उत्तर देती—

आयेंगे बेटा तुम्हारे पापा जरूर आयेंगे, और तुम्हारे लिये ढेर सारी चीजें और ढेरसारे खिलौने भी लायेगे ।

बच्चा आखिर बच्चा ही तो ठहरा वह सतुष्टि पूर्ण स्वर में कहता—

‘हां ! मम्मी जब की बार जब पापा ढेर सारे खिलौने लायेंगे तो मैं किसी को भी नहीं खिलाऊंगा, सब मुझे सलचाते हैं, कोई भी अपना खिलौना खेलने को नहीं देता ।’

और वह शांत होकर माँ की गोद में सिर रखकर सो जाता है, पर नेहा की आँखों में नींद नहीं । वह झूठ के जिस दुबह भार को अपने हृदय में समेटे जी रही है यह तो उसका अतमन ही जानता है किससे कहे अपनी अतव्यथा ।

घर में बूढ़े सास ससुर हैं जिनके वढ़ावस्था का सहारा एक मात्र बेटा ही घर से विमुख हो गया है, उनसे कुछ कहना उनके घावों को कुरेदना है । बच्चे का जी रखने के लिये हँसना बोलना सब पडता है, अपने हृदय पर पत्थर रखकर उसकी सारी इच्छायें भी पूरी करनी पडती हैं । घर में आने वाली जिस बड़ी बूढ़ी के वह चरण स्पश करती हैं, वे आर्शावाद के स्थान पर यही भाव्य कहती हैं—

“अपने पति को घर वापिस बुलाले’ यही तेर लिये सबसे बड़ा आशीष है ।”

ऐसा लगता है, जैसे पति को घर से दूर भेजने की जिम्मदारी उसी पर है उसका तो जीवन ही हास्यास्पद हो गया है जो मिलना है एक ही प्रश्न, ।

कब आयेंगे तुम्हारे पति ? तुम्हारे जीवन साथी कब आयेंगे ? सास ससुर की प्रतीक्षा रत निगाहे जैसे उसके बदन में सलाख की तरह चुभती रहती—

“क्या हमें बेटे की ओर से जीवन भर कोई सुख नहीं मिलेगा” ?

और दिन रात उसका पीछा करती बेटे की उत्सुक दृष्टि पिता को देखने की ललक लिये उसका भोला बचपन—

मम्मी पापा कब आयेंगे ? निरुत्तर सी हो उठती है वह । वसे अगर देला जाये तो इस सम्पूर्ण घटना श्रम में वह कहीं भी दोषी नहीं है ? उसके पति की आकाश कुसुम छूने की तो ब्रह्मवैद्या ने ही उसे विद्योगिनी का जीवन जीने के लिये विवश कर दिया है जिसमें उसकी सम्पूर्ण कामनायें होमायित हो रही हैं, है, नहीं तो क्या कमी थी उसमें ।

नेहा स्वयं पढ़ी लिखी पोस्ट ग्रेजुएट है उसका पति माँ बाप का इकलौता पुत्र है शहर में तीन चार मकान हैं उनके । पर जो ऊपरी चमक दमक में आकर्षित हो जिसने पाँच सितारा होटल में ऐश आराम किया हो उसके लिये घर की थाली का क्या महत्व है, यह तो ईश्वर की उसके उपर बसी अनुकम्पा है कि वह आराम निभर है, अपना और अपने बेटे का पेट भर सकती है नहीं तो जीवन में कुछ और भी आसदियों से गुजरना पड़ता ।

सब अच्छी तो दस वर्ष हो गये विवाह को, नेहा ने पति सुख का एक क्षण भी अनुभव नहीं किया । हर समय वह जैसे मुखौटा सा लगाये रहता । अतरेण क्षणों में भी वह मुखौटा उससे दूर न रहता ।

विवाह के बाद कुछ वर्षों तक तो सन्तान न होने के कारण रवि उद्विग्न रहा, और जब सोनू का जन्म हुआ तो भी उसे सहन नहीं हुआ जिसकी वह कामना करता था जब वह सब सामने आया तो उस यथाय को भी वह सहन नहीं कर सका ।

रवि को हर समय लगता जैसे नेहा केवल सोनू की देखभाल करती है, उसके लिये एक क्षण भी नहीं निकाल सकती, उसकी सारी व्यस्तता भाग दी

बसल सोनू तक सीमित है उसकी व्यस्त दिनचर्या में रवि के लिये कहीं भी कोई स्थान नहीं है। कहते हैं सतान माता पिता की आत्मा का भ्रम होता है पर जब भी सोनू रवि के सामने आता, वह आग बबूला हो उठता, उस की रगो में उसी का खून दौड़ रहा था पर पता नहीं सोनू को सामने देखते ही रवि क्रूर हो उठता।

नहा सानू की देखभाल में व्यस्त रही और वह अपने आप से सबता रहा। इस तरह उन दोनों के बीच एक दीवार सी उठती गई जिसमें दिन प्रतिदिन शब्दों के घात प्रतिघात से भजवूती आती गई।

वह कुछ ज्यादा ही निष्ठुर हाता गया। जब वह सबेरे कहती—

—मुझे दर हो रही है थोड़ा स्कूटर से टैंकरी स्टैंड छोड़ दिजोये।

तो नकारात्मक उत्तर मिलता।

अगर यह कहती—

सानू का खून छूट दिजोये।

वह तपाक से उत्तर देता—

मुझे पहले ही लेट हा रही ह।

फालनू काम के लिये मेरे पास समय नहीं है।

अनुरोध मरे शब्दों में नहा कइसी घर की स्थिति से आप परिचित है, आप कोई काम क्यों नहीं खोज लेते ?

वह खोज कर उत्तर देता— मेरे से किसी की गुलामी नहीं होती, मैं तो अपना काम करूँगा। कीच मकोड़े की तरह रेंगना मुझे मजूर नहीं मैं तो इतनी ऊँचाई तक जाऊँगा कि आसमान की बुलन्दियों को छू लूँगा।

पर कहाँ छू सका था वह बुलन्दियों को। पर तो घरती पर ही टिकाने पडत हैं पर उसके लो पैर घरती पर टिकते ही न थे किसी तरह वह सफलता हासिल कर सके, अपना व्यापार जमाले इसके लिये नेहा न क्या नहीं किया। बूढ़े बाप ने पैसा मगाया प्रदूषण लिया, लोगो से बज लेकर रुपये दिये कि वह कारवार बलाये पर उसने सब मटियामेट कर दिया सिर पर कज का भार चढ़ गया सा असग।

जब लेनदार उस परेशान बरन लगे तो वह नेहा के गहन तक बचन का उतारू हा गया नहा से यह उत्तर मिलने पर कि—

गहने उसने पास नहीं है, यह उसे नहीं दे सकती, समुर जी के पास रखें ह उनस स लिजीय । तो यह अनाप सनाप बकन लगा—

—पहन लना गहा ।

—सजा सवार लना अपन आप का ।

—अरे जब मैं नहीं रहू गा । तो गहने पहन कर किस दिसाओगी ।

पिता जी से मागन पर उ'हाने आभूषण दन से साप इ'वार कर दिया—

' हमारे पास रखे गहन बहू की अमानत है उसने विपदा के साथी हैं हम किसी भी कीमन पर तुम्ह यह गहन नहीं देग ।'

ता वह आग बयला हो उठा था, नहा को सुनावर बासा था—

"तुम्हे गहना स प्यार है, पति की इज्जत स प्यार छोडे ही है, जब मैं परशान हाकर घर बार छोड कर चला जाऊगा, तब माथे पर हाथ घर कर रा लेना ।" और एक दिन उसने इस धमकी को सच कर ही दिखाया । तीन बप हा गये बट घर से दूर चला गया और परदेश म जाकर बैठा है कभी कमार पत्र आ जात हैं वह भी उलाहना से भरपूर—

तू मेरी चिंता मत कर । अपनी और अपने बट क सुख की सोच ।

व्यग्य बाणो से आहत होते होते वह इतनी अघिब असतुलित हो उठी है कि कमी कमा ता एसा लगता है कि वह पागल हो जायगी । इधर आजकल वह और भी बदलाव लक्ष्य करने लगी है । जब भी गली मोहल्ले स गुजरती चार औरत भ्रूण्ड बनाये सखी नजर आती और उसकी आर सकेत करके मुँह फेर कर हँसन लगती इस प्रकार के साकोतक हावभाव की जब पुनरावति होन लगी ता उसके सब का बाघ टूट पडा ।

पडोसिन की नौकरानी अवसर उसके घर आया करती थी, एक दिन नेहा उससे पूछ ही बठी—

'क्यो री राधा— य औरते मुझे देखकर इशारे बाजी बयो करती हे, और फिर मुह फेर हँसन क्या लगती है—'

पहल ता राधा टस से मस नही हुई पर जब तहा न कुछ प्रलोभन दिया ता वह सच बात उगल ही बँठी—

अब क्या बताव थीवी जी य सब औरतें कहती है कि बाबूजी न परदेश मे दूसरा विवाह रचासिया हागा तभी तो घर जाने का नाम नही लेते ।’

उसकी इन बातों का सुनकर नहा ने हृदय मस्तिष्क मे विचारा भी आँधी से चलने लगी ।

क्या ऐसा हा सच्चा है ? नहीं नहीं यह इन सब फालतू बातों को अपने हृदय मे स्थान नहीं दगी ।

पर फिर मन मे क्या आता है—जिम तरह का उमुक्त स्वभाव उसका पति का है उसमें तो यह बात हाँकी असम्भव नहीं । अगर वास्तव मे यह सच हुआ ता क्या हागा उसका ? उसने सोचू का ? सोचू के भविष्य का ?

क्या उस सारी उम्र यू ही तिलतिल करके जलना पड़ेगा ?

नहीं अब वह और प्रतीक्षा नहीं करेगी, वह मध्य सोचू को लेकर उनसे पास जायगी, सोचू के भविष्य के लिये उनसे लौटन का आग्रह करगी, वह बच्चे के लिये उनसे सामने गिडगिडाने “को भी तय्यार है—

“मैं आपका राई रक्ती कज चुका दूगी आपको लेनदार रुपयो के लिय परशान न करगे, कम से कम मेरे लिय न सही इस न ही सी जान सोचू के लिये तो घर वापस लौट चलिये ।’

नेहा हड़ निश्चय करने बट को साथ लेकर घर से आखिर निकल ही पडी वैसे भी गर्मों की छुट्टिया थीं सानू खुश था कि—

पापा के पास जा रह है रल गाडी मे बठ कर जायेंगे, आहा कितना मजा आयेगा । बाबू पहुच कर खोजन पर उसे रवि का बवाटर मिल ही गया ।

दोपहर के दा बजे जब नेहा ने रवि के घर का द्वार खटखटाया, तो नारी स्वर सुनाई पडा—

कौन है ?

प्लीज दरवाजा खोलिये, म बहुत दूर स आ रही हूँ । मुझे बहुत जररी काम है ।

नारी स्वर में उत्तर सुनाई पड़ा।

जी वे घर में नहीं हैं। प्लीज आप दरवाजा खालिय एक बार भरी बात सुनने का कष्ट तो करिये।

सुन्दर सी सजी सवरी महिला न द्वारा खोला उससे साफे पर बठन का आग्रह किया, वह बैठ गई तथा सानू को भी बैठा लिया बाहर थोड़ी बहुत बूदा बादी हो रही थी इसलिये वह भीग भी गई थी। उसकी इच्छा हो रही थी कि गम-गम चाय का प्याला उसे मिल जाये तो कितना अच्छा हो।

उसी समय वह महिला अ दर चाय बनाने चली गई वह बैठी बठी कमर की वस्तुओं का निरीक्षण करने लगी।

कमरा करीने से सजा हुआ था कमर की सम्पूर्ण व्यवस्था किसी के सुवचिपन का एहसास करवा रही थी मेज पर उसके पति की तस्वीर थी जो मद मद मुस्करा रहा था।

नेहा बोली—क्या मुझे मिस्टर रवि की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी ?
वह महिला बोली—

हां वह सध्या के बाद घर लाटते हैं आप आराम करिये, मुझ से कहिये, आपको उनसे क्या जरूरी काम है।

—जी मुझे जो कहना है उही से कहूंगी, मैं उनकी बहुत घनिष्ठ मित्र हूँ।

भूठ बोलने को विवश थी वह। लेकिन उसके गले में पडा मंगल सूत्र रश्मि के मन में एक उत्पठा सी जगा गया।

नेहा लम्बी यात्रा से थक गई थी इसलिये उस कमरे के एकांत वातावरण में नींद आनी स्वाभाविक थी।

सध्या होने पर नेहा नहा धोकर तरोताजा हाकर वह ड्राइंग रूम में बठी ही थी कि कालवेस की आवाज सुनाई पडी, दरवाजा खोलने पर सामने रवि उसका पति खडा था नहा को एकाएक सामन देखकर वह एक बार ता हतप्रभ सा हो गया लेकिन फिर आवेश में आकर वाता—

क्यों आईं हा तुम यहा ? तुम्हें हिम्मत कस हुई यहाँ आने की ? जाओ उहाँ के पास जाओ जा तुम्हारा पक्ष लेते हैं मुझे तुम्हारा एक पैसा भी नहीं चाहिये।

माटी की गंध]

नहा समेत स्वर में बोली—आप मेरी बात तो सुनिये सब कुछ छाड़कर घर वापस लौट चलिये मैं आपकी साख गिरो नहीं दूंगी, एक-एक पाई चुवा दूंगी। आपको किसी के सामने नीचा नहीं देखना पड़ेगा, मैं आपके मान सम्मान पर किसी प्रकार की ठेस नहीं आने दूंगी।”

पर रवि लगातार बोले जा रहा था। चली जावो यहाँ से जब मैंने गहने मागे तब तुम्हारा पति प्रेम कहीं गया। जब बाजार में मेरी इज्जत नीलाम हो रही थी तब कहीं गया था तुम्हारा यह प्रस्ताव। मुझे परेशान न करो मेरे तुम्हारे रास्ते अलग हैं, तुम वापस लौट जाओ।

नेहा अनुराध के स्वर में बोली—

कम में कम मेरे लिये न सही इस नही भी जान सोनू के लिये घर वापस लौट चिनिये इसने आपका क्या बिगाड़ा है इसे पिता के प्यार से बर्चित क्यों कर रहे है यह आपक बिना नहीं रह सकता दिन रात पापा-पापा की रट नगाता रहता है।

सानू कमर के कान में खडा दीवार की तरफ मुँह किये सुबक सुबक कर राये जा रहा था उसकी हिचकी बढ़ नहीं हो रही थी, वह बीच-बीच में पापा-पापा बोलता जा रहा था कुछ क्षण के निमेष कमरे का वातावरण बाँकल हो उठा था।

रवि सोच ही नहीं पा रहा था कि उसे क्या करना चाहिये वह तेज बदनो स कमरे में इधर से उधर घूम रहा था कुछ क्षण के लिये वह अबेला रहना चाहता था इसलिए वह दूसरे कमरे में खला गया— रवि दूसरे कमरे में जाकर टबल वेड पर धम्म में बैठ गया आने बाद कर नी। और मोचने लगा एकाएक उसने रश्मि का आवाण दी पर किसी प्रकार का प्रत्युत्तर न पाकर वह उठ बठा अचानक डेबिंग टेबिल के सामने रखे पत्र पर उसकी निगाह पड़ी—

प्रिय रवि,

तुमस मिलने ब्राइ महिला तुम्हारी घनिष्ठ मित्र नहीं अपितु तुम्हारी घम-पत्नी है मैंने तुम दोनों की राते सुनली है। नेहा के गले में पडा मंगल सूत्र और उनके साथ तुम्हारा प्रतिभ्य तुम्हारे ही बेटे के जीवन को सुखमय बनाने के लिये मैं तुमस बहुत दूर जा रही हूँ। मुझे दूटने का प्रयास न करना। हम दोनों न जो सुख के क्षण एक साथ बिताये हैं उन क्षणों की तुम्हें सांगघ है कि तुम अपनी पत्नी और बच्चे के साथ घर वापस लौट जाओ। —तुम्हारी रश्मि

घरौदा

ग्राज दो बप होने को आये, चारपाई पर पड़े रहना शिप्रा की नियति बन चुकी है। खटिया पर लेटे-लेटे ऋण अवस्था में वह कमी छन की कडिया गिनती है, कमी चारो ओर लगे मकड़ी के जालो को देखती है, ज्यादा ऊब हाने पर कलेण्टर की तारीख गिनने लगती है सबसे पूछनी है—

अब अवकाश कब पड़ेगा ?

दीपावली की छुट्टियां कब से हो रही है ?

बच्चे छुट्टियो मे घर कब तक आयेगे ?

इन सबका हिसाब चाहे कोई उसे बताय या न बताये, वह अपनी उगलियो पर सदा यही हिसाब जोडती रहती है। विस्तर पर पड़े पड़े और कोई काम भी तो नहीं है समय गुजरे भी ता कमे।

शिप्रा के कमरे से बाहर का दृश्य स्पष्ट दिखाई देता है। एक तरफ बाग बगीचे, सामने सडक पर दौडती कारें, स्कूटर, मोटर साइकिल के हान की आवाजें कानो मे हर समय गू जती रहती है। कमी-कमी जी बहसाने के लिए सडक पर आने जाने वाले व्यक्तियो को देखती रहनी है। इनमे से कुछ बच्चो से वह परिचित भी हो चुकी है जो बस्ते सटकाये रिक्शा पर चढकर स्कूल जाते हैं उनका रिक्शा नहीं दिखने पर वह व्याकुल हा उठती है। सर पर सज्जी की खबिया उठाये दो तीन औरते उसके दरवाजे पर भी हॉक लगा जाती है इन सबने उसकी दिनचर्या में अापना स्थान बना रखा है पड़े-पड कर भी ता क्या, ज्यादा उब होने पर पास पड़े टी बी वा बटन उमेठने लगती है।

पर क्या शिप्रा शुुरु से ऐसी ही थी वह स्वय अपन बारे मे साचती है—क्या मैं वही शिप्रा ह जो भीला दूर हुए से पानी भरकर लाती थी, गाने बच्चा का पालन पोषण करती थी स्कूल में उनकी अभिमायक घर मे माँ और बीमार पडने पर डाक्टर का काय भी उसे ही अदा करना पडता था। आस पडास के सार लोग उसकी गत्रियता पर आश्चर्य घकित थे। कभी उसने बच्चा के लिए ट्यूटर नहीं रखा वह स्वय बच्चा को पढाती लिखाती, उनका होमवक करवाती। स्कूल टीघर बच्चो से रहते—

माटी की गंध]

[103

“सुम्हारी मा स्वय इतना अच्छा पढाती है, तुम्हे किसी के कोच की क्या जरूरत है”

बच्चों के बीमार पडन पर वह दिन रात एक कर दती । उसे याद है जब एक बार तीनों बच्चों का चेचक का टीका एक साथ लगा था तब सारे बच्चे बुखार म जलने लगे थे सबन मिलकर उसे हलकान कर दिया था तब भी वह दिन रात घर बाहर दौडती रहती । क्याकि घर की सारी व्यवस्था भी उसे ही करनी पडती थी । घर मे न कोई बडा आत्मी था और न कोई नौकर चाकर सब व्यवस्था उसे ही करनी पडती थी ।

उसका मौशल एव भाग दौड देयकर डाक्टर व्हते-

आप तो इतनी समझदार है, बच्चा का इलाज करते करत स्वय डाक्टर बन बैठी है, सारी दवाओं के नाम ता आपको मुँह जवानी रटे पडे है, आपको हम क्या सलाह दे सकते है ।

शिप्रा के पति ठहरे सरकारी अफसर । अक्सर बाहर दौर पर ही रहा करता । बच्चा को उगली पकड कर उनका स्कूल म एडमिशन कराना, फीस मराना सब शिप्रा का दायित्व था ।

शिप्रा बचपन मे स्वय पढ लिख नहीं पाई थी पर पढाई की ओर उसका बहुत रुझान था । जब वह छोटी थी तो अक्सर अपने बाबूजी स स्कूल जाने के लिये जिद कर बठती थी, क्योंकि घर से स्कूल जाने के लिये घोडा बग्घी साइस सब मौजूद थे, पर उसकी बातें सुनकर बाबूजी पढाई की बात अक्सर टाल दिया करते-

अरे मुनिया तू पढाई की रट क्यों लगाती रहती ह ?

तुम्हे कोई डिप्टी कलेक्टर बनना है क्या ?

क्या तुम्हे दफतर मे कलम घिसनी है ?

अरे तेरे की घर गृहस्त्री ही ता चलानी है, उसके लिय पढाई करने की क्या जरूरत है ?

मिडिल पास करत ही अपने दायित्व की पूर्ति के लिय पिताजी ने शिप्रा का विवाह छोटी उम्र म कर दिया गया । लेकिन पति के रूप में उसे पढ़ा लिखा विद्वान नर प्राप्त हुआ इसलिये उसके मन मे जो पढने की सलक थी उसे सप्तपदी के बचन भी मिटा नहीं सके ।

उसके स्मृति पटल पर अभी भी वह दृश्य प्रकृत है, जब विनू और बिजू के जन्म के बाद वह अत्यन्त व्यस्त हो उठी थी। स्वयं तो छोटी उम्र की भी पूरा ध्येय भी नहीं हो पाई थी, उपर से दा बच्चों के पालने की जिम्मेदारी। जब उन दोनों की चाटी गूँथ कर माथे पर बाजल का डिठोना लगाकर वह उन्हें निहारती तो उसे उनमें सबकुछ की छबि के दर्शन होते बच्चा के प्रति उसकी व्यस्तता भी उसके मन से पदाई करन की भावना निकाल नहीं सती थी।

और इसी तान पितासा ने शिप्रा को हाई स्कूल बाट की परीक्षा देने पर विवश कर दिया। वह भूली नहीं है उम्र दुःसह व्यथा का।

जब बिंदु गम में थी और यह मैट्रिक की परीक्षा दे रही थी उसका मुँह पीला पड़ गया था ओखा के नीचे काले घब्र से तजर आते थे पास पड़ोस के लोग यहाँ तक कि उसके भैया जब भी देगते चिंतातुर होकर पूछ बैठत-

शिप्रा- तरा मुँह इतना उतरा हुआ क्या है ?

क्या तू रात भर जाग कर पढ़नी ह। क्या तू बिना कुछ खाये पीये परीक्षा देन चली जाती है ? जर शिप्रा ज्यादा नहीं तो थोड़ा बहुत दूध ही पी लिया कर।

पर शिप्रा मौन रहती। वह साचनी यदि मैंने सच उगल दिया तो उस परीक्षा देन स चर्चित होना पड़ेगा। शिप्रा की इस लगन न ही उसे मैट्रिक की परीक्षा में उत्तीर्ण कर दिया था।

लेकिन उसके पश्चात शिप्रा महसूसी के चक्कर में ऐसी पड़ी कि उलझनी ही चली गई।

एक के बाद एक स ताना का जन्म देने के बाद शारीरिक दृष्टि से वह इतनी कमजोर होती गई कि एक बार तो उसके प्राणों पर ही धन आई थी। उस समय उसकी बड़ी बेटा बिंदु छाया की तरह उसके साथ लगी रहती। भाई बहना को सम्भालना, माँ को अस्पताल में भर्ती कराना, घर की व्यवस्था करना सब उसे ही तो देखना था वह सबसे बड़ी जो थी। बाबूजी तो हर मास बतन मिलने पर रुपये भेजकर सब दायित्वों से मुक्ति पा लेते थे पर शिप्रा को दो दो बप के अंतराल से जो प्रसव पीडा सहन करनी पड़ती थी, उस देख सुनकर बिंदु अन्दर तब क्षाप उठती थी, कभी कभी तो उसे लगता कि कहीं माँ इसी प्रसव पीडा के दौरान समाप्त तो नहीं हो जायेगी। उस समय हास्पिटल में लेबर रूम के बाहर सही मा की वेदना पूरा चीख पुकार सुनकर उसके हाथ प्रार्थना के लिए स्वत ही जुड़ जाते और वह अस्फुट स्वर में बुदबुदाने लगती-

हूँ भगवान ! मरी मा को बचा लीजिये ।

जो भी डाक्टरनी लेबर रूम से बाहर निकलती बिन्दु उसके पास बदहवास सी भाग कर पहुँच जाती एक बार जब मा की हालत बहुत खराब हो गई थी और डाक्टरनी ने उससे कहा था—

क्या तुम्हारे घर में कोई बड़ा आदमी नहीं है, तुम्हारी मा की जान खतरे में है जल्दी से जल्दी जाकर ये इन्जेक्शन और दवाइया ले आओ तो जान बच सकती है । उस समय वह भागती हाँफती हुई दवाइया एवं इन्जेक्शन का डिब्बा लेकर तुरन्त दौड़ती हुई हास्पिटल वापिस आई थी और डाक्टर का दवाइया माँपते हुये बिन्दु ने डाक्टरनी के पैर पकड़ लिये थे—

मरी मा को बचा लीजिये डा साहब नहीं ता मेरे सारे भाइय बहन बिना मा के अनाथ हो जायेंगे फिर हम कौन प्यार करेगा । डाक्टर साहब प्लीज मेरी माँ को बचा लीजिये न ।

उस मोली बच्ची का आतनाद डाक्टर की भी सवेदना का भ्रमभोर गया था, उसने उसे उठाते हुये कहा—

‘धराराओ मत मरी बच्ची, हम पूरी काशिश कर रहे हैं तुम्हारी मा को हम जरूर बचायेंगे, तुम्हारी प्रार्थना खाली नहीं जायेगी’

यह सुनकर वह आश्वस्त सी हो उठी थी । लाख रोकने पर भी वह साचने की बाध्य हो हो उठती थी कि अगर माँ न बची तो उसके सारे भाई बहनोका क्या होगा ? क्या वे भी पढीस के उन बच्चों की तरह हो जायेंगे जिनकी माँ सौनली है । क्या उससे माइ बहन भी दिन भर घर के कामों में नौकर की तरह जुटे रहेंगे और उन्हें स्कूल का मुँह देखना भी नसीब न होगा उसकी आँसों के समक्ष सौतेली माँ की आकृतिया घूमने लगी उसे ऐसा लगा जैसे अपने माइ-बहन के ऊपर पढ़ने वाले सारे प्रहारी का वह अकेले महन कर रही है और वह घुटनों में मुँह छिपाकर सिसक सिसक कर रो पड़ी ।

उसी समय एकाएक लेबर रूम से नवजात शिशु के रोने की आवाज सुनाई पड़ी और नर्स ने आकर उसके घुटना में रक्खे सर को ऊपर उठाकर कहा

‘सुनो सुनो तुम्हारे बहन हुई है और तुम्हारी मा अब खतरे से बाहर है ।

उस समय ता बिन्दु को जैसे पक्ष से लग गये थे । वह नग पैरा दौड़ती भागती घर जाकर बूढ़ी नानी को यह समाचार दे आई थी आर सुशी के आवेग से उसने सारे माइ बहनों को इकट्ठा करके गले से लगा लिया था ।

शिप्रा जो इस असहनीय वेदना की मुक्तमोगी थी वह भी इन जान लेवा पीडाओ से अ दर ही अन्दर बहुत टूट चुकी थी उसका शरीर अत्यन्त दुबल हो गया था । अगर सत्तान को ज म देने की इस प्रसव पीडा को उसे बार बार न भेलना पडता तो शायद यह आज इतनी अवश कृशनाय और दुबल न हाती । पूण वयस्क न हीन पर भी कच्ची उम्र मे उसने जिस असहनीय वेदना को बार बार सहा है उससे बह अदर तक खोसली सी हा गइ है । बाश उसके बाबूजी उसकी शादी जल्दी न करते ता उसे इन त्रासदिया स बार बार गुजरना न पडता और आज उसकी यह हालत बदापि न हाती ।

वह चाहती है बोइ उससे कुछ पूछे, उसने अनुभव का ताम उठाय तो वह यही कहगी कि छोटी उम्र मे शादी करना अपराध है छाटी उम्र में शादी करन पर मातृत्व का भार उसके लिये मात का कारण हो सकता है । माता पिता को चाहिये कि कम उम्र मे अपनी बच्ची की शादी करवे पापके भागी न बन और न ही अपनी बच्ची का नारकीय जीवन जो न के लिये विवश करे ।

केवल यही नहीं समाज म एसी कामल बलिया हजारो की सख्या म है जिह छोटी उम्र म विवाह होने पर अपनी कामनाओं का हामायित करना पडता है मातृत्व के उस गौरवमय पद को वहन करना पडता है जिसके लिये वह तन मन से तयार भी नहीं होती ।

वह समाज की इन दृढ़िया के प्रति चेतना जागृत करेगी । वह मले ही प्रयश है पर अब बह और बालिकाओ को इस दुश्घन का शिकार नहीं होने देगी।

शिप्रा अपने आप को अक्षम सिद्ध नहीं होने देगी, वह अपने पैरों का इताज करवायगी स्वय को सक्षम बनायेगी ताकि वह घर घर घूम कर और बालिकाओ को इस बाल विवाह की आहुति मे बलिदान होने से रोक सके । वह मले ही सामाजिक एव पारिवारिक दृष्टि स दशित हुई है, पर दूसरों का इस देश का शिकार हरगिज न होने देगी ।



नाम	श्रीमती शीला व्यास
जन्म	1 जुलाई 1944
जन्म भूमि	वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
राम भूमि	बीकानेर (राजस्थान)
शिक्षा	एम ए द्वय, इतिहास, हिन्दी, बी एड
● एम ए (हिन्दी)	काशी हिन्दू विश्व विद्यालय, वाराणसी
● एम ए (इतिहास)	राजस्थान विश्व विद्यालय, जयपुर
● बी एड	राजस्थान विश्व विद्यालय, जयपुर
प्रकाशित पुस्तकें	अनुभूति के स्वर (काव्य संग्रह) हिन्दी व्याकरण कक्षा 3 से 8 तक भ्रंशेजी व्याकरण कक्षा 3 से 8 तक
पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित—	शिविरा, छकियारी, सृजन के छायास, प्राज्ञ, राजस्थान स्टैंडर्ड, दिशाकल्प (पाक्षिक पत्र)
आकाशवाणी बीकानेर के द्वारा कविताओं एवं कहानियों का निरंतर	प्रसारण
प्रकाश्य	दश (लघु उपन्यासिका) और इन्द्रधनुष के पार (काव्य संग्रह)
सम्प्रति	शिक्षा विभाग, सहायक अध्यापिका राजकीय बोधरा माध्यमिक बालिका विद्यालय गयाशहर बीकानेर, (राजस्थान)